ISSN : 23202467

युगान्तर

अन्तरराष्ट्रीय शोध पत्रिका

आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका

हेड ऑफिस : ए–5, क्रिश्चियन कॉलोनी, पटेल चेस्ट, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

मो॰ 9455251733, 9918156392, Website: www.theyugantar.in

Email:Akhilesh_tiwari1979@yahoo.com, santoshtiwari05712@gmail.com

वर्ष 2022 – अंक 45
जून 2022

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
(A Peer-Reviewed Research Journal)
(with impact factor)

ISSN : 2320-2467

संपादक : संतोष कुमार तिवारी

प्रधान–सम्पादक : प्रो. आनंद प्रकाश त्रिपाठी, डॉ. हरि सिंह गौर – केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सह–सम्पादक :
प्रो. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी (पूर्व कुलपति) – संस्कृत विश्वविद्यालय, उज्जैन
प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी (पूर्व कुलपति) – संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो. हुकुम चन्द, विभागाध्यक्ष, संगीत, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
डॉ. कमलेश कुमारी
प्रो. बी.एन. भालेराव – दिल्ली
डॉ. रुचिरा डिंगरा – दिल्ली
डॉ. ललिता त्रिपाठी – भोपाल
डॉ. कविता भाटिया – दिल्ली
डॉ. सीता लक्ष्मी – विशाखापट्टनम्
डॉ. आचार्य एस. शेपारत्नम् – आंध्र विश्वविद्यालय
डॉ. प्रतिभा पांडे – मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
प्रो. आभा रूपेन्द्र पाल –पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़
प्रो. शुभ जोहरी – आर.टी.एम. विश्वविद्यालय, नागपुर
प्रो. जे.पी. मिश्रा – रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर
डॉ. शिवदयाल सिंह – महर्षि विश्वविद्यालय, अजमेर
डॉ. मो. शाकिर शेख – विभागाध्यक्ष, पूना कॉलेज
डॉ. गोपाल कृष्ण शर्मा – विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन
डॉ. राकेश राणा, एमएमएच पीजी कॉलेज, गाजियाबाद
डॉ. रेखा अरोड़ा – दिल्ली

प्रमुख प्रवासी सम्पादकीय सलाहकार समिति :
डॉ. विजय कुमार मेहता – अध्यक्ष, अखिल विश्व हिन्दी समिति, न्यूयॉर्क, अमेरिका
प्रो. सत्येन्द्र श्रीवास्तव – कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, कैम्ब्रिज (यू.के.)
डॉ. शेर बहादुर सिंह – विश्व हिन्दी सेवी, न्यूयॉर्क, अमेरिका
डॉ. पद्मेश गुप्त – अध्यक्ष, यू.के. हिन्दी समिति, लंदन
डॉ. सुषमा बेदी – कोलम्बिया युनिवर्सिटी, न्यूयॉर्क
प्रो. हेमराज सुन्दर – महात्मा गांधी संस्थान, मोका, मॉरिशस
स्नेह ठाकुर – संपादक वसुधा, टोरण्टो, कनाडा
उषा राजे सक्सेना – उपाध्यक्षा, यू.के. हिन्दी समिति, लंदन
डॉ. सुरेश चन्द्र शुक्ल – अध्यक्ष इण्डो नाईजीरियन सूचना एवं सांस्कृतिक मंच
डॉ. ऊषा देवी शुक्ला – डर्बन विश्वविद्यालय, डर्बन (दक्षिण अफ्रीका)
अपर्णा क्षीरसागर – डॉफिन विश्वविद्यालय, पेरिस, फ्रांस

आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका

हेड ऑफिस : ए–5, क्रिश्चियन कॉलोनी, पटेल चेस्ट, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

मो॰ 9455251733, 9918156392, Website: www.theyugantar.in

Email:Akhilesh_tiwari1979@yahoo.com, santoshtiwari05712@gmail.com

डॉ. घनश्याम शर्मा – वेनिस विश्वविद्यालय, इटली

रामप्रसाद भट्ट – हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

डॉ. पूर्णिमा बर्मन – यू.ए.ई.

प्रो. तजेन्द्र शर्मा – अमेरिका (यू.के.)

इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व लेखकों का है। आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों की अपनी अभिव्यक्ति है। युगांतर अन्तर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका अथवा सम्पादक मण्डल का उनसे सहमति होना आवश्यक नहीं है। युगांतर शोध–लेख, मूल प्रकाशन एवं मंगवाने हेतु निम्न पते पर सम्पर्क करें। (कृपया लेख ई–मेल के माध्यम से ही स्वीकार किया जायेगा।)

Editor in Chief

युगांतर शोध–पत्रिका

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृ.सं.
1.	सन्त नितानन्द का साम्प्रदायिकता विषयक चिन्तन – डॉ. कृष्णा मल्हान	**1-3**
2.	उसमान की 'चित्रावली' में सामाजिक बोध – डॉ. प्रवीण कुमार कटारा	**4-9**
3.	'अर्थ' पुरुषार्थ का स्वरूप एवं वर्तमान चिंतन – डॉ. प्रमोद कुमार वैष्णव, ऊषा कुमावत	**10-13**
4.	मध्यमवर्गीय कामकाजी महिलाओं के शारीरिक एवम् मानसिक स्थिति का उनके जीवन पर प्रभाव : सुल्तानपुर जिले के संदर्भ में – डॉ. बृजेश कुमार पाण्डेय	**14-22**
5.	समकालीन काव्य में प्रजातांत्रिक मूल्यों की अभिव्यक्ति – डॉ. लालचंद सिन्हा	**23-27**
6.	वाल्मीकीय रामायण में अलंकार–प्रयोग–डॉ. मोहन लाल मेघवाल	**28-31**
7.	Global Recognition and Future Prospects of Vedic Mathematics and Indian Knowledge System -Dr. Lokesh Jasoria	**32-38**

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–45, वर्ष–2022 (अप्रैल–जुलाई, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.5

संत नितानन्द का साम्प्रदायिकता विषयक चिन्तन

– डॉ. कृष्णा मल्हान
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय से.–9,
गुरुग्राम

संक्षेप –

सन्त नितानन्द मध्यकालीन निर्गुण काव्य–परंपरा में आने वाले आधुनिक काल के धुरंधर सन्त हैं। इन्होंने अपनी वाणी में साम्प्रदायिकता का जम कर विरोध किया है।

प्रस्तावना –

सन्त सम्प्रदायों और पन्थों में पनपने वाली रूढ़िवादिता, गवानगतिकता और अंध श्रद्धा को अच्छी प्रकार पहचानते थे। सन्त तो अपने समय के विद्रोही व्यक्ति हुए हैं। जिन्होंने मूल्य–मूढ़ता एवं रूढ़ियों का जमकर खण्डन किया। वे अपने विवेक और अखण्ड विश्वास के सहारे खुली आँखों चलने वाले एकले पन्थी रहे हैं। उन्होंने इस पन्था–पन्थी या साम्प्रदायिकता का समर्थन नहीं किया।

'आधुनिक कबीर' में इस संदर्भ में डॉ. राजदेव सिंह ने सन्तों की साम्प्रदायिकता का उल्लेख बड़े सुन्दर ढंग से किया है। उनका कहना है कि– कबीर ने अपने आसपास की परिस्थितियों को बदल डालने के लिए किसी सामाजिक संगठन की जरूरत नहीं समझी। दुनिया को सुधारने की अपेक्षा निज को सुधारना उनकी दृष्टि में अधिक सही था। जो मनुष्य की स्वतन्त्रता का विश्वासी है, जो अपने लिए ही नहीं, दूसरों के लिए भी आत्म–उत्तरदायित्व का अधिकार चाहता है, जो मनुष्य को हर प्रकार से अपनी निर्मिति का एकमात्र उत्तरदायी मानता है, वह संरचनाओं और पन्थों का न निर्माण करता है, न उसकी निर्मिति का आदेश देता है। इसी संदर्भ में विषय को और अधिक स्पष्ट करते हुए डॉ. सिंह का कहना है कि– 'सम्प्रदाय वस्तुतः व्यक्ति के स्वतन्त्र निर्णय और आत्म उत्तरदायित्व को सीमित आहत् और खण्डित करता है। उसके भीतर रहने वाले व्यक्ति की स्वाधीनता चिंता इसके कारण विकसित नहीं हो पाती। उसे नए प्रयोग करने की छूट नहीं मिलती। आधुनिक मनुष्य की चिरकाम्य धर्म निरपेक्षता के मार्ग में संस्था सबसे बड़ी बाधा बनती है, क्योंकि संस्था का संविधान भी अन्ततः एक धर्म–रूढ़ि ही बन कर सामने आता है। संस्था का अनुशासन 'अपना विकास स्वयं करो' की अनुमति नहीं दे सकता, अतः संस्था आधुनिक और आधुनिकता की विरोधी है। संस्था परम्परा को अधिक महत्व देती है। संस्था व्यक्ति के महत्व को अस्वीकार करती है।'[1] सन्तों की साधना मूलतः व्यक्तिगत साधना है। इसमें व्यक्ति के सम्बल–उसका विवेक, निष्ठा, आत्म विश्वास होते हैं। कबीर की ही तरह सन्त एकदम से आधुनिक होते हैं जो इन पन्थों और सम्प्रदायों को व्यक्ति–विकास के लिए घातक एवं अवरोध मानते हैं। सन्त नितानन्द जी ने भी अपनी वाणी में स्वामी, महन्त और गुरु–घंटानों की अच्छी तरह से खबर ली है।

नितानन्द जी का कहना है कि नाम के स्वामी हैं जिह्वा के रसिया हैं, प्रभु पर इनका भरोसा नहीं है और घर–घर भिखारी बने फिरते हैं। स्वामी और महन्त जो अपने–अपने पन्थ और सम्प्रदाय बनाए फिरते हैं ये झूठे हैं। सच्ची भक्ति इनकी सामर्थ्य से बाहर है। निष्काम भक्ति और प्रभु के प्रति निष्ठा बड़ी कठिन है। आजकल के विषयी स्वामी बहुत हैं और बड़े सस्ते हैं। ये संध्या, आरती और पूजा–अर्चना केवल दिखावे के लिए करते हैं। ये दम्भी हैं। ये चेले और चेलियां बनाकर ये स्वयं को ऐसे फंसा लेते हैं जैसे बंदर अज्ञानवश अपनी मुट्ठी नहीं खोलता और पकड़ लिया जाता है। लद्दू ऊँट की तरह ये केवल भार ढ़ोते हैं।[2]

कलिकाल के स्वामियों का उल्लेख करते हुए नितानन्द जी कह रहे हैं कि ये अपने अनुयायियों से धन हड़पने में बड़े तत्पर हैं। द्वार–द्वार पर लोगों से धन संग्रह करते फिरते हैं। यथा –

लोभी स्वामी कलियुगी, लेने के सम दान।
घर घर द्वारे यों फिरै, ज्यों ताते दूध बिलाव।।[3]

इन पंथक स्वामियों पर नाम बड़े और दर्शन छोटे वाली कहावत चरितार्थ होती है। नाम तो अपना कामधेनु रखते हैं और करनी गधे की है यथा –

स्वामी होना सहल है, दुर्लभ हर का हेत।
कामधेन का नाम धर, चरें जात खर खेत।।[4]

नितानन्द जी का कहना है कि जो गुरु बने हुए शिष्यों की संख्या बढ़ाने और पन्थ को बढ़ाने में व्यस्त रहते हैं, हरिभक्त से रहित हैं। ऐसे गुरु यदि एक पैसे में पच्चीस भी मिले तो भी नहीं लेने चाहिए। यही आशय निम्न साखी प्रस्तुत कर रही हैं, यथा –

सिख साखा की आस में, जपै नहीं जगदीश।
ऐसे गुरु न लीजिए, पैसे के पच्चीस।।[5] क

आजकल के गुरु केवल कथनी–शूर हैं। रहनी के नाम पर ये थोथे हैं, झेठे हैं और भीतर से पूरी तरह विषयी और लम्पट हैं। जब तक मन तथा इन्द्रिय पर विजय न पा ली जाए कथनी व्यर्थ है। 'कथनी' 'करनी' अर्थात् आचरण में प्रकट होनी चाहिए अन्यथा कोई लाभ नहीं। कथनी–शूर नाना प्रकार के प्रवचनों से लोगों को आकर्षित करते हैं किन्तु करनी के नाम पर इनके पास कुछ नहीं होता। नितानन्द का कहना है कि इनके लिए हरि–दर्शन असम्भव है। यथा–

कई भांत कथनी कथै, रहनी रिका नोही।
नितानन्द किस विधचलैं, हर दर्शन के मोही।।[6]

पंडितों ने लोगों को भ्रम में डाल रखा है। ये अपने पुस्तकीय ज्ञान के दम्भ में ही मस्त हैं। इनके भीतर सच्चा ज्ञान नहीं है। ये तो केवल पोथियों में ही भगवान को ढूंढना चाहते हैं। जब तक वास्तविक ज्ञान नहीं मिलेगा यह स्वयं तो अज्ञान में रहेंगे ही औरों को भी अंधेरे में रखेंगे। निम्न साखी में इन्हीं भावों को वर्णित किया गया है, यथा–

पुस्तक पढ़–पढ़ बहु मुए, अन्तर नहीं प्रकास।
पण्डित ढूंढै खेत को, बीज गुरु के पास।।[7]

शाक्त लोग अपनी शक्ति की पूजा में ही सब कुछ पाना चाहते हैं। सच्चे हरिभक्तों से ये शाक्त लोग दूर ही रहते हें। वे अज्ञान के अंधकार में हैं। ये केवल शक्ति–पूजा और मोक्ष पद पाना चाहते हैं। उनके लिए सच्चे ज्ञान की आवश्यकता है अन्यथा वे अंधेरे में हैं, यथा–

साकत पूजै सकति को, हर जन से अभिमान।
पकड़ बांध जम ले गया, बिना गुरु के ज्ञान।।[8]

कई वैरागी बने फिरते है। और कई ऊंची–ऊंची व्यास–गद्दियों पर विराजमान हैं जो लोगों को बड़े–बड़े दृष्टान्त और कथाओं से ज्ञान वितरित करते हैं किन्तु सच्चे ज्ञान के बिना ये भी अंधेरे में हैं। आजकल कुछ सन्तों का वेश तो सिद्धों का होता है किन्तु ज्ञान के नाम पर इनके पास कुछ नहीं होता। ये ढोंगी और पाखण्डी होते हैं। सिंह के वेश में निरे गधे होते हैं, यथा–

बाना पहरा सिंघ का, मांह गधे का ज्ञान।
जग में सिद्ध कहाय कर, ले डूबया अभिमान।।[9]

अनेक पन्थों और सम्प्रदायों वाला–पण्डित, मुंडित, दर्शनी (कनफटे) सन्यासी, वैरागी आदि ये केवल पत्थर के पुजारी हैं, इन्हें पत्थर की ही पहचान है, सच्चे परमात्म से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है। निम्न साखी में इन्हीं सम्प्रदायों के ढोंगमय व्यवहार की झांकी प्रस्तुत की गई है, यथा–

पंडित मुंडित दर्शनी, संन्यासी वैराग।
पाथर ही के पारखू, सकैं नहर से लाग।।[10]

पत्थर की मूर्ति को भगवान का नाम दे देते हैं, इस भ्रम में कितने ही गंवार डूब गए हैं। यदि पत्थर–पूजा से हरि मिलते तो संसार में कौन दुख सहता? वे पंडित अज्ञानी हैं जो इस पत्थर को भगवान कहते हैं। नितानन्द जी इस मूर्ति–पूजा से बहुत दुखी हैं। इनके अज्ञान का क्या ठिकाना। पत्थर का

मन्दिर, पत्थर का देवता और उसमें अन्धे पत्थर (सालिगराम) की सेवा करते हैं। सच कहो तो वे पंडित–पुजारी झगड़ा करते हैं। भला यह पत्थर मूर्ति ही भगवान है तो इससे बड़ा तो पहाड़ है, यथा–

पाथर से ठाकुर बने, तो हर से बड़ा पहाड़।
नितानन्द साची कहै, करै पुजारी राड़।।[11]

पत्थर–पूजकों की ही भाँति ये तीर्थ करने वाले भी भ्रम में हैं। अरे, ऊपर से शरीर साफ कर लिया तो क्या! भीतर तो मैल रह गया और जब तक भीतर का मैल है तो इस तीर्थ व्रत करने का क्या लाभ? इसी प्रकार मंदिर मढ़ी, गुफा आदि में की जाने वाली पूजा–सेवा, आरती और इनमें बजाए जाने वाले घंटा झांझ आदि सभी पेट भरने के ही साज–सामान हैं, इनमें सच्ची भक्ति अथवा भगवद्–प्राप्ति का दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। इन तीर्थ–व्रत आदि से मन का मैल साफ नहीं हो सकता। वह तो गुरू के द्वारा दिए हुए सच्चे ज्ञान से ही संभव है।

ये नाना सम्प्रदाय केवल स्वांग करते हैं। वास्वत में इनके पास सच्चा ज्ञान नहीं होता। माला–तिलक धारण किये स्वांग बनाए फिरते हैं। हरि तो केवल सच्ची प्रीति से ही प्राप्त होता है। वे माया के दास हैं, उन्हें हरि से अथवा उनकी भक्ति से कुछ लेना–देना नहीं। ये तो झूठे देवी–देवता की पूजा में उलझे हैं।

नितानन्द जी का कहना है कि ये सारे सम्प्रदाय सांसारिकता में लिप्त हैं। इन्हें कंचन–कामिनी की चाह है। ये तो हरि–चरणों में पहुँच ही नहीं सकते। ये सभी स्वांगी हैं।

नितानन्द जी इन सभी सम्प्रदायों अथवा पंथों से अलग रहने की सीख देते हें कि ये सभी सम्प्रदाय माया–रूप हैं। इनसे स्वतंत्र होकर और अपनी ही बुद्धि के बलबूते पर चलने की सलाह देते हुए नितानन्द कहते हैं कि–

पखा–पखी को छोड़ दो, पखा–पखी में काल।
नितानन्द निरबंध की, निपट नवेली चाल।।[12]

सारा संसार इन अलग–अलग पक्षों में बंधा हुआ, झूठ के साथ चल रहा है। ये पक्ष–विपक्ष सम्प्रदाय सभी झूठे हैं। ये तो ऐसा ही जैसे सागर में रहे और रत्न हाथ न आए, यथा–

पख ले भूल्या जगत सम, चल्या झूठ के साथ।
समुद्र मांहि रीता रह्या, रतन न आया हाथ।।

निष्कर्ष –

मनुष्य को चाहिए कि वह पन्थ अथवा सम्प्रदायों के चक्कर में न पड़े, तभी उसका हित हो सकता है। किसी प्रकार के पन्थ अथवा सम्प्रदाय का दावा न जताए और सभी से अलग रहे तभी वह स्वतंत्र होकर अपने स्वभाव को जान सकता है।

संदर्भ –

1. आधुनिक कबीर : राजदेव सिंह, पृ. 36
2. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, साखी–5, पृ. 165
3. वही, सा. 6, पृ. 165
4. वही, सा. 7, पृ. 165
5. वही, सा. 8, पृ. 165
6. वही, सा. 36, पृ. 168
7. वही, सा. 52, पृ. 169
8. वही, सा. 60, पृ. 170
9. वही, सा. 80, पृ. 172
10. सत्य–सिद्धान्त–प्रकाश, सा. 83, पृ. 72
11. वही, सा. 16, पृ. 197
12. वही, सा. 25, पृ. 203
13. वही, सा. 2, पृ. 335

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–45, वर्ष–2022 (अप्रैल–जुलाई, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.5

उसमान की 'चित्रावली' में सामाजिक बोध

डॉ. प्रवीण कुमार कटारा
असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी विभाग
स्व. मामा बालेश्वर दयाल राजकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कुशलगढ़
जिला–बांसवाड़ा, राजस्थान–327801

सूफी कवि उसमान 1613 ई. की चित्रावली एक सुन्दर काव्यरचना है जिसे जायसी के पद्मावत के बाद सर्वश्रेष्ठ रचना कहा जा सकता हैं दिलचस्प बात यह है कि ये दोनों ही कवि भारत के सबसे न्यायप्रिय शासकों के काल में रहे हैं। जायसी शेरशाह सूफी तथा उसमान जहाँगीर के शासन काल में रहे हैं। अतः उसमान पर तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव उनकी रचना चित्रावली पर पड़ना स्वाभाविक है। वे चिश्तिया सम्प्रदाय से संबद्ध थे। शेख निजामुद्दीन के नेतृत्व में चिश्ती सिलसिले का भारत भर में विकास हुआ। इस लोकप्रियता का मुख्य कारण यही था कि एक विशेष धर्म के अनुयायी होते हुए भी उनमें धार्मिक कट्टरता लेशमात्र भी नहीं थी। साथ ही उनकी विचारधारा में मानव–मात्र के लिए अनेक उपयोगी और कल्याणकारी तत्व विद्यमान थे। उन्होंने भारतीय परम्परा के उस अंश को ग्रहण किया था जो उनके अनुभव की कसौटी पर खरा उतरता था जिसमें समाज सेवा और मानव–विकास की प्रेरणा ही प्रमुख थी।[1]

सूफी सम्प्रदाय का सम्बन्ध शामी विचारधारा से प्रभावित इस्लाम धर्म से है। इस्लाम धर्म को हम भक्ति भावपूर्ण धर्म भी कह सकते हैं भक्ति मार्ग में अपने आराध्य की महत्ता का ज्ञान करके उसके प्रति पूर्ण श्रद्धा रखना परमाश्यक है। इसी प्रकार इस्लाम धर्म में अल्लाह की शक्ति तथा सामर्थ्य का ज्ञान करके केवल उसके वचन व कृपा पर श्रद्धा रखना परमावश्यक है। सूफी भावधारा ने इस भक्तिमार्ग में स्वतंत्र चिन्तन तथा दार्शनिक विचारधारा का समावेश किया है।[2] इस्लाम केवल एक ईश्वर को सच्चा स्वीकार करता है। वह ईश्वर इस सृष्टि का कर्त्तासंहारक एवं रक्षक सभी कुछ है। उसकी इच्छा प्रधान है। सूफी कवि उसमान ने अपने ग्रन्थ 'चित्रावली' के 'स्मृति खण्ड' में परमतत्व ईश्वर सम्बन्धी विचारों का वर्णन किया है। उसमान कहते हैं 'सबसे पहले मैं उस चितेरे का वर्णन करता हूँ, जिसने इस संसार रूपी चित्र का निर्माण किया है।" इस चित्र में उसने नारी एवं पुरुष, सूर्य और चन्द्रमा काला एवं सफेद तथा लाल एवं पीले रंगों को निर्मित किया है। इस संसार में उसके अतिरिक्त कोई ऐसा तत्व नहीं है जो पानी के ऊपर इस प्रकार के चित्रों का निर्माण कर सके। उसने ही पवन के ऊपर वचनका चित्र लिखा है। उसके इस विचित्र लेख को कोई भी मिटाने में सक्षम नहीं है। इस चित्र का निर्माण कर वह उन चित्रों में इस प्रकार समाविष्ट हो गया है किससे प्रत्यक्ष न देखा जा सके। उसमान के शब्दों में–

आदि बखानों सोई चितेरा, यह जग चित्र कीन्ह जेहि केरा।
कीन्हेसि चित्र पुरुष औ नारी को जल पर अस सके सँवारी।
कीन्हेसि जोति सूर ससितारा, को अस जोति सके जग पारा।
कीन्हेसि बचन वेद जेहि सीखा, को अस चित्र पवन पर लीखा।
अस विचित्र लिखि जानै सोई, वहि बिनु मेट सके नहि कोई।
कीन्हेसि रंग स्याम औ सेता, राता पीत और जग जेता।
कीन्हेसि रूप बरन जहाँ ताई, आपु अबरन अरूप गुसाई।
अगनि पवन रज पानि के, भाँति भाँति ब्योहार।
आपु रहा सब माँहि मिलि, को निगरावै पार।[3]

सूफी साधना में परमात्मा से एकत्व प्राप्त करने की प्रक्रिया में बताया गया है कि साधक को (मुर्शीद) (गुरु) का बराबर चिन्तन करना चाहिए। गुरु अपनी आध्यात्मिक शक्ति द्वारा साधना में रत शिष्य की रक्षा करता है और साधना पथ पर अग्रसर होते रहने में उसकी सहायता करता रहता है। गुरु उसके प्रत्येक विचार और कर्म का दर्शक बना रहता है। इस प्रकार साधना करते–करते एक ऐसी स्थिति आती है कि साधक सभी मनुष्यों और सभी वस्तुओं में गुरु को ही देखता है, इसे सूफी 'पुरुष में लय कर देना' कहते है। गुरु अपनी अलौकिक शक्ति से शिष्य की इस स्थिति को सहज ही जान जाता है।

इस स्थिति में आने पर गुरु उस साधक को सम्प्रदाय के संस्थापक दिवंगत पीर की दिव्य शक्ति के अधीन कर देता है और गुरु की शक्ति के सहारे साधक पीर को प्रत्यक्ष करता है साधक फिर पीर का अंग बन जाता है और दिव्य शक्ति का अधिकारी हो जाता है। इसे 'पीर में लय' कर देना कहते हैं।[4] उसमान ने चित्रावली में गुरु की उपयोगिता बताई है। सुजान परेवा से कहता है "हे गुरु तुम नाथ हो, मैं अनाथ हूँ, अतः मेरी डोर को पकड़कर खींचो। तुम मेरे अगुआ हो, में तुम्हारा पिछलग्गू हूँ।

मैं अनाथ तुम्ह नाथ गुरु, गहि खैचहुँ मम डोर।
तैं मोर अगुआ पथ तहं, मैं पिछलगुआ तोर ।।

मध्यकाल में प्रायः सभी कवियों ने संसार को मिथ्या, निःस्सार कहा है। वे इसे स्वप्न के समान मिथ्या मानते हैं। कबीर इसे सैमल के सुमन के समान निःस्सार कहते हैं। इसलिए उनकी दृष्टि में मन को कभी संसार में न लगाना चाहिए।

यह ऐसा संसार है जैसा सेंबल फूल।
दिन दृश के व्योहार को झूठे रंग न भूलि।।[5]

उसमान के अनुसार यह संसार काठ की पुतरी है जिसमें जीव नाचता रहता है। वह वास्तविक सत्य से अंजान होता है। इस संसार की धन सम्पदा रसभोग सभी असत्य है।

कब लगि नर ज्यों आपु छिपावसि, इह जग पुतरी काठ नचावसि।
जग भूला यहि काठ के नाँचा, जानि न जाय झाँठ अरु साँचा।।[6]

माया को हिन्दी नीति कवियों ने बहुत प्रबल कहा है। यह ऐसी है कि सिद्ध पुरुषों पर भी अपना प्रभाव दिखाए बिना नहीं रहती–

सुर नर मुनि कोउ नाहि, जेहि न मोह माया प्रबल।
अस बिचारि मन माहि, भजिय महा मायापतिहि।।[7]

'चित्रावली' में उसमान कहते हैं कि काम, क्रोध मद, मोह, लोभ आदिविकार जीवात्मा को घेरे रहते हैं।

"पाँचो भूत रहैं, नित घेरे, कोइ मरै चखु सोहन हेरे।
जोगी परा पाँच बस, ताते भा विकारार।
पाँचों नांच नचावहीं, आपनि आपनि बार।।[8]

यही माया विषय–वासना रूपी झकोरों से माया रूपी बटमार किसी को छोड़ते नहीं, संसार छोड़ने पर ही इनसे छुटकारा मिल सकता है।

पुनि जो माया पौन झंकोरा, बुझा दीप मिटि गयो अँजोरा।।[9]

सूफी काब्यों में मांस भक्षण इस्लाम के विरूद्ध नहीं है, परन्तु इनके काव्यों में सम्भवतः वैष्णव मत के प्रचार के प्रभाव के कारण मास–भक्षण का निषेध किया गया है। शुक्ल जी के शब्दों में– प्रेम प्रधान वैष्णत मत के इस पुनरुत्थान में हिंसा का भाव यों तो सारी जनता में आदर लाभकर चुका था पर साधुओं और फकीरों के हृदय में विशेष रूप से बदमूल हो गया था। क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या सगुणोपासक क्या निर्णुणोपासक, सब प्रकार के साधु और फकीर इसका महत्व स्वीकार कर चुके थे।[10] उसमान कहते हैं कि सब जीवों को कटना है तथा मरने से किसी का बचना संभव नहीं है। इसलिए वही व्यक्ति ज्ञानी हो सकता है, जो इस सिद्धान्त को मान ले कि दूसरों का जीव भी हमारे ही जीव के समान है।

कटब जाय समानक माहीं। मारै का न बिसारा काहीं।
जा कह बंधहि दोहें तेहि ज्ञाना। आनक जीव आप जस जाना।।[11]।

आगे उसमान कहते हैं कि जंगल में जहां तहां लोग मांस भूनने में लगे हुए थे। और अपनी रसना से स्वाद ले रहे थे। लेकिन किसी को अपने मांस की चिन्ता नहीं थी। मांस को भुनने से उससे पानी चू रहा था। ऐसा प्रतीत होता थाकि मांस–हृदय से रो रहा हो। हम लोग मूर्ख हैं जो निश्चिन्त होकर सोये हुए हैं और हमें अपने शरीर की चिन्ता नहीं है तथा दूसरे के शरीर को हम बिना सोच–विचार के ही

भूनकर खा रहे हैं। इस प्रकार के मनुष्यों का भविष्य में क्या होगा जो मांस को भूनकर खाते हैं। जिस प्रकार का दारूण दुःख आज हम इन पर देख रहे हैं उसी प्रकार का दारूण दुःख किसी दिन हम पर भी आयेगा। हम इन्हें युद्ध में खोज–खोजकर मार रहे हैं लेकिन इनके मारने से हमारी आँखें खुलजानी चाहिए।

बैठा कुँअर सिंह जस गूजा, लाग जहाँ तहँ होइ मँसभूजा।
भूजहि मास जीभ रस लाहू, आपन माँस न सूझे काहू।।
भूजत चुवै सरागन पानी, रावै मास हिये अस जानी।
हम खर खास निबंत जो सोई, ऐहिसे गात सुराग परोई।।
फिरि फिरि जारहि छाड़हिं नाहीं, होइहि कहा मास जो खाही।
जस हम इन कहँ दारून जाना, इनहूँ पर दारून है आना।।
देखि देखि मारो रन माँखे, खुली निगाह भई के आँखे।[12]

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। यद्यपि समाज में हित–अहित करने वाले अनेक प्रकार के प्राणी हैं तथापि मानव–जीवन हित–साधक तत्वों पर आधारित है। हित साधन की दृष्टि से मित्रता अधिक वांछनीय है। जिसे अच्छा मित्र प्राप्त नहीं उसका जीवन सूना ही रहता है। सच्चे मित्र की प्राप्ति से जीवन धन्य हो जाता है। उसमान ने 'चित्रावली' में अपने चार मित्रों का वर्णन किया है। इन मित्रों के साथ उसमान की घनिष्ठता थी। इन चार मित्रों में प्रथम अबूबकर मलिक थे जो सत्यवादी, ईमानदार थे। दूसरे उमर हुए जो न्यायप्रिय थे। तीसरे उलमाँ थे, जो बहुत बड़े ज्ञानी पंडित थे। चौथे मित्र अली थे जो बहुत बड़े यौद्धा और सूरवीर थे।

चार मीन तेहि संग सयाने, सूर समान चहूँ खंड जाने।
चारों करहि एक की चिंता, एक मतें वे चारों मिता।।
पहिले अबूबकर सतवादी, सत जान जो भो अनवादी।
दूजे उमर न्याउ प्रतिपारा, जे विध कारन सुतहि सँघारा।।
तीजे उलमाँ पंडित ज्ञानी, जे करि ज्ञान लखा बिधि बानी।
चौथे अली सिंह रन सूरा, दान खड्ग जे तिहुँ जग पूरा।।[13]

'आत्मा वे जायते पुत्र' की उक्ति से आत्मज को अपना ही रक्तांश माना जाता है। पुत्र ही परिवार के लिए दीपशिखा होता है, जिसके कन्धों पर पूरे परिवार का वारा–न्यारा आधारित रहता है। पुत्र के बिना मनुष्य की सद्गति नहीं होती। समस्त सुख–वैभव से सम्पन्न होने पर भी पुत्र के बिना परिवार सूना सा प्रतीत होता है। किन्तु वर्तमान युग में पुत्री का भी वही महत्व है जो परिवार में पुत्र का। नीति के मर्मज्ञ कवि रहीम 'कपूत' को परिवार का अँधेरा मानते हैं–

जो रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारे लगै बढ़े अंधेरो होय।।[14]

चित्रावली में पुत्र के बिना राजपाट घन, देश सभी सुखों को व्यर्थ बताया गया है।

राजपाट घन देस, सुख सुत बिनु कौने काज।
अब सब लेहु राज तुम, लेतु अहो शिवसाज।।[15]

उसमान ने 'चित्रावली' में कहा है "काव्य में मृत्यु की कथा कहते मुझे कष्ट होता है और जो प्रेम का अमृत पी लेता है वह किसी के मारने से नहीं मरता, उसका युग–युग तक जीवन रहता है।

कबितन्ह मरन कथा के गाई, मोहिं मरत हिय लागु छोहाई।
औ जे प्रेम अमी रस पीया, मरै न मारे जुग जुग जीया।।[16]

उसमान कहते हैं कि आदि प्रेम को सर्वप्रथम ईश्वर ने ही निर्मित किया है। जहाँ कहीं भी रूप ने संसार में अपने वाणिज्य का प्रसार किया है, वहीं प्रेम ने आकर अपना सुन्दर रूप प्रस्तुत किया है। प्रेम की समस्त सत्ता ईश्वरीय कृपा का फल है, यही कारण है कि सूफी सिद्धांतों में प्रेम एक अनिवार्य तत्त्व के रूप में स्वीकार किया गया है। उसमान ने प्रेम को ज्ञान, ध्यान, जप, तप, संयम और नियम से भी उत्तम बताया है–

ज्ञान ध्यान माद्धिम सवै, जप तप संजम नेम।
मान सो उत्तम जगत जन, जो प्रतिपारै प्रेम।।[17]

समाज एवं व्यवहार के पारस्परिक सम्बन्ध का मूलाधार मधुर वाणी है। वाणी ही व्यक्ति को मान–सम्मान पद से सुशोभित करती है, और वाणी ही घृणा का स्रोत बन जाती है। उसमान कहते हैं ज्ञानी लोगों को बिना पूछे कोई ज्ञान नहीं देना चाहिए। क्योंकि व्यक्ति को उचित समय पर ही बोलना चाहिए।

बिनु पूछे किछु ना कहै, तै पंडित सहदेव।।[18]

इसी प्रकार का भाव जायसी भी पद्मावत में कहते हैं कि जो कोई बिना पूछे बात कहता है उसकी बात मिट्टी के मोल हो जाती है।

'कोउ बिन पूछे बोल जो बोला। होइ बोल माटी के मोला।।[19]

कहा जाता है भाई जैसा मित्र और भाई जैसा शत्रु संसार में कोई नहीं है। बात भी ठीक है एक और लक्ष्मण और भरत का उदाहरण है तो दूसरी ओर सुग्रीव और बालि का। उसमान ने चित्रावली में अपने पाँचों भाईयों का उल्लेख किया है जो ज्ञान बुद्धि गायन, पीर आदि विधा में निपुण है।

सुने नाऊ उतसाह चित, मिले होइ जिय साँति।
पाँच भाई जनु पाँच मिअ, अपनी अपनी भाति।।[20]

जिस प्रकार जायसी ने शेरशाह सूरी के न्याय वर्णन को अत्यन्त प्रबल शब्दों में व्यक्त किया है, ठीक उसी प्रकार उसमान ने मुगल शासक जहाँगीर के न्याय वर्णन को भी निष्पक्षकता की दृष्टि से किया गया बताया है जहाँ शेर और गाय एक गली में विचरण करते नजर आते हैं, अर्थात् निर्बल और बली दोनों व्यक्ति निडर होकर जहाँगीर के शासनकाल में विचरण करते नजर आते हैं। जहाँ अमीर और गरीब दोनों व्यक्तियों के लिए न्याय समान दृष्टि से देखा जाता है।

पुहुमी परै न पावै काटा, हस्ती चाँपि सके नहिं चाँटा।
गाय सिंह गवनहिं एक गली, बल भा अबल अबल भा बली।।[21]

दान की महिमा कुछ ऐसी हे कि इसका नतीजा तुरन्त निकलता है। इसके प्रभाव से द्वेष करने वाला भी दोस्ती का हाथ बढ़ाने लगता है। उसमान ने भी भारतीय परम्परा के अनुसार जहांगीर को एक दानवीर राजा के रूप में चित्रित किया है जो किसी गरीब को एक ही बार इतना दान दे देते हैं कि उसे पुनःदुबारा आने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है।

तहाँ बैठि पुहुमी पति भारी, देइ दान कर बार उघारी।
एकहि बेर एक कहँ देई, दूसरि बेरि न कोऊ लेई।।[22]

व्यक्तित्व के विकास के लिए विद्या सबसे बड़ा धन है। क्योंकि विद्वता की तुलना में तो राजपद को भी नहीं रखा जा सकता। विद्या सबसे बड़ा धन है। अन्य धन व्यय करने से घटते हैं, पर विद्या का धन ऐसा है, इसे जितना ही व्यय किया जाए इसकी वृद्धि होती जाती है। वृन्द कहते हैं–

'सुरसति के भण्डार की बड़ी अपूरब बात।
ज्यौं खरचौ त्यौं तीं बढ़े बिन खरचे घटि जात।।[23]

उसमान ने 'चित्रावली' में विद्या की उपयोगिता प्रतिपादित की है। राजा ने अपने पुत्र 'सुजान' के लिए विद्याधर नामक गुरु को कुंवर के लिए ज्ञान अर्जित करने के लिए रखा। गुरु ने मन लगाकर अपने शिष्य को विद्या सिखाई, अतः समस्त गुण शीघ्र ही उसके ह्रदय में समाविष्ट हो गये। उसने शीघ्र ही अमर कोष, व्याकरण, योग और वैधक का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया। उसने संगीत विद्या और ताल का ज्ञान प्राप्त कर लिया। ज्योतिष में कोई उसका सानी नहीं था। वह भूगोल के अंशों का भी बखान कर सकता था। चौदह वर्ष तक विद्या ग्रहण कर राजकुमार चौदह विद्या निधान हो गया।

पंडित रहसी आसिष दीन्हा, अग्या राज परहि सिर लीन्हा।
अस चित लाइ गुरु समुझावा, थोरे दिवस गुन हिरदे छावा।।

अमरकोष व्याकरण बखाना, जोग बैधकन्हि कै सब जाना।
पिगल लघु दीरघ पिठतासी, कठहि मांझ छंद चौरासी।।
पठी संगीत ताल देखरावा, एक सुर में दस राग सुनावा।
ज्योतिष महं कोई बाद न आटा, एक पल सहस बार के बांटा।।
अंश भूगोल बखानि सुनवा, पल महं मनु फहमी फिरी आवा।
पढ़ि गुनि चौदह बरष लगु, दस औ चारि निधान।
निपुन दुवा दस भाव महं, सब पढ़ि बैठु सुजान।।[24]

श्रेष्ठ राजा के आश्रय में प्रजानन सुसम्पन्न एवं समृद्धशाली होती है। प्रजा को न सताना ही राजा का सबसे बड़ा धर्म है। शरीर में जिस प्रकार मस्तिष्क का अपना प्रमुख स्थान होता है, बिना उसके शरीर अस्थिपंजर, मज्जा से पूरित निर्जीव मूर्ति बना रहता है। उसी प्रकार राजा के बिना राज्य या शासन का संचालन सम्भव नहीं है।

'उसमान ने चित्रावली' में अपने समकालीन शासक जहाँगीर की जमकर प्रशंसा की है उसे वीर, गुणी, पराक्रमी सातों द्वीपों का सम्राट बताया गया है।

नूरद्दीन महीपति भारी, जाकर आन मही महँ सारी।
चारिउ खूँट नवाई खाँडे, गजपति रहा न कोउ बिनु डाँडे।।
चढइ तुरंग होइ अनुरागी, के अहेर कै होकर लागी।
जो बर कइ बैरी जग चाँपै, सबन डरे पताल कुल कांपै।।
जहाँ जहाँ परगट सब देसा, बाजि चरन चीन्हें अहि सेसा।
हेठ जाइ बलि बासुकि चाँपा, ऊपर डरि सुरपति पुन काँपा।।[25]

उसमान ने मनुष्य को कर्म करने के लिए प्रेरित किया है वे कहते हैं जो व्यक्ति सोता रहता है अर्थात् कर्म नहीं करता वह अभागा व्यक्ति है। कुँवर सुजान घोड़े पर सवार हो गया तथा फौज में चारों ओर पुकार पड़ने लगी। जो जगा हुआ था वह साथ लग लिया और जो अभागा सोता हुआ था वह पिछड़ गया। जो पथिक पेट भर भोजन खाकर तथा छाया का आश्रय लेकर निश्चिन्त सोते हैं, वह बाद में पछताते हैं। आधुनिक विद्यार्थियों को उसमान की यह शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है कि जीवन में मेहनत और लगन से ही सफलता प्राप्त की जा सकती है।

जागत अहा संग उठ लागा, सोवत पांछू परा अभागा।
हल बल जाहि न तुरी बिलाने, का होई अब के पछताने।।
कोऊ मिले बीच मिल जाई, बहुत बीच पुनि परे भुलाई।
पंथी भोजन पेट भर, छांह सुहाई पाय।
होइ निश्चिन्त जो सोए, सो पाछे पछताय।।[26]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि उसमान की चित्रावली में व्यावहारिक नीतियों की ही प्रधानता है जिनकी उपयोगिता वर्तमान सन्दर्भ में भी देखी जा सकती है। 17वीं शताब्दी में भी उसमान शिक्षा को सर्वोपरि मानते थे। गुरु की महत्ता, मधुर वचन, माया, भाग्य, मांसभक्षण का विरोध पुत्र, मित्र, भाग्य, प्रेम, समय, वाणी, दान की उपयोगिता, न्यायप्रियता, भूख, सत्य, संतोष, मनुष्य, सेवाभाव, पिता, आदर्श पत्नी, भोगवाद का विरोध और जागरूकता यह ऐसे विषय हैं जिन्हें उन्होंने नैतिकता की दृष्टि से 'चित्रावली' में चित्रित किया है। लगभग 600 वर्षों के पश्चात् भी उनके नैतिक कथन आज भी प्रासंगिक हैं।

संदर्भ सूची

1. हरिश्चन्द्र वर्मा : मध्यकालीन भारत (भाग–4), पृ. 494
2. सरला शुक्ल : हिन्दी सूफी कवि और काव्य, पृ. 4
3. जगमोहन वर्मा : चित्रावली, पृ. 4
4. रामपूजन तिवारी : सूफीमत साधना और साहित्य, पृ. 353
5. कबीर ग्रन्थावली, पृ. 24
6. जगमोहन वर्मा : चित्रावली, पृ. 3
7. रामचन्द्र शुक्ल : तुलसी ग्रन्थावली, पृ. 105
8. जगमोहन वर्मा : चित्रावली, पृ. 82
9. वही, पृ. 43
10. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : जायसी ग्रन्थावली, पृ. 400
11. जगमोहन वर्मा : चित्रावली, पृ. 41
12. जगमोहन वर्मा : चित्रावली, पृ. 16
13. जगमोहन वर्मा रू चित्रावली, पृ. 4

'अर्थ' पुरुषार्थ का स्वरूप एवं वर्तमान चिंतन

डॉ. प्रमोद कुमार वैष्णव
आचार्य संस्कृत
हरिदेव जोशी राजकीय कन्या महाविद्यालय बांसवाड़ा
ऊषा कुमावत

शोधार्थी संस्कृत विभाग
गोविंद गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय बांसवाड़ा

पुरुषार्थ–चतुष्टय – संस्कृत भाषा रूपी वृक्ष अपनी विभिन्न शाखाओं से पल्लवित एवं पुष्पित है। जिसकी सुरभि उसके वाङ्ग्मय के द्वारा चारों ओर प्रसारित होती रही है। संस्कृत वाङ्ग्मय की इसी श्रृंखला में मनीषियों ने पुरुषार्थ चतुष्टय का भी चिंतन–मनन एवं उसकी व्याख्या इसकी उपादेयता के साथ किया है। "पुरुषैर्थ्यते इति पुरुषार्थरूं" – यह पुरुषार्थ भारतीय संस्कृति की आत्मा माना गया है। ये पुरुषार्थ मानव जीवन का वह चरम लक्ष्य प्राप्ति का साधन है, जिसमें धार्मिक, भौतिक काम आध्यात्मिक आदि तत्वों का निवेश है। यही पुरुषार्थ चतुष्टय आचार–व्यवहार से संबंधित होने के साथ ही भारतीय दर्शन में मानव मूल्यों के सिद्धांत के रूप में सतर्क स्थापित किया गया है। पुरुषार्थ की अवधारणा के मूल में 'उद्धरेदात्मनात्मानं' की दृष्टि है तो सर्वमंगल की कामना इसका उदात्त आदर्श है। संस्कृत वाङ्ग्मय के आचारशास्त्र, नीतिशास्त्र, साहित्यशास्त्र, दर्शनशास्त्र, वैदिक एवं लौकिक साहित्य में निबद्ध उस पुरुषार्थ चतुष्टय में पाप–पुण्य, नीति–अनीति, स्वर्ग–नरक, बंधन–मोक्ष, सुख–दुःख, लौकिक–अलौकिक, शुभाशुभ, प्रवृति–निवृति आदि के विषयों एवं उद्देश्यों के रूप में अध्ययन किया जा सकता है।

मानवीय जीवन को आदर्शमय, उद्देश्यपूर्ण, व्यवस्थित क्रम एवं उपादेयता पूर्ण से सिद्ध करने के लिए भारतीय विद्वानों ने इस पुरुषार्थ चतुष्टय की योजना प्रस्तुत की है। जिसमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों की पृथक–पृथक, आश्रित एवं सहसंयोजक के रूप में मान्यता प्रदान की है। ये मानव जीवन के विशिष्ट अवयवों पर निर्भर करते है जो– 1. शरीर 2. मन 3. बुद्धि 4. आत्मा है।

इन चारों ही अवयवों की वास्तविक, शुद्ध एवं उपयोगी निष्पत्ति पुरुषार्थ चतुष्टय से संभव मानी गयी है। जहाँ शरीरगत आवश्यकताओं की पूर्ति 'अर्थ' पुरुषार्थ से होती है, वहीं 'काम' रूपी पुरुषार्थ से मन की चेतनाचेतन समस्त आवश्यकताओं को निवृत किया जा सकता है। निश्चयात्मक बुद्धि एवं संसार के परे परम तत्व का ज्ञान साधन आत्मा में प्रवृति क्रमशः 'धर्म एवं मोक्ष' पुरुषार्थ द्वारा किया जाता है। भारतीय आचारशास्त्र, धर्मशास्त्र एवं नीतिशास्त्र आदि ग्रन्थों में प्रथमतः त्रिवर्ग पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम) की संकल्पना की गई, बाद में उपनिषद काल में 'मोक्ष' पुरुषार्थ को भी सम्मलित कर इन चार पुरुषार्थ के सिद्धांत को अपनाया गया। जहाँ 'धर्म' त्रिवर्ग पुरुषार्थ की व्यवस्था का मुख्य आधार है, वहीं त्रिवर्ग पुरुषार्थ 'मोक्ष' रूपी साध्य के साधनभूत होकर कार्य में प्रवृत्त होते है।

'अर्थ' पुरुषार्थ का स्वरूप –

'अर्थ' पुरुषार्थ की गणना दूसरे पुरुषार्थ के रूप में की जाती है। 'अर्थ' पुरुषार्थ में अर्थ शब्द 'ऋ' धातु से निष्पन्न है, जिसका अभिप्राय है– गति[1] पुरुषार्थ चतुष्टय में अर्थ की परिभाषा देते हुए कहा गया है– "यतः सर्वप्रयोजन सिद्धिः स अर्थ"।[2] वहीं चाणक्य ने अर्थ को लोक जीवन का मुख्य प्रवर्तक माना है है। उन्होंने अर्थ की स्वभाविक प्रवृति को स्पष्ट करते हुए कहा है– "सुखस्य मूलं धर्मः। धर्मस्य मूलं अर्थः।"[3] इसे चाणक्य ने 'वार्ता' भी कहा है। इसी प्रकार अन्य विचारकों ने भी अर्थ की प्रधानता को स्वीकार है एवं अन्य पुरुषार्थ में धर्म और काम दोनों की सिद्धि में इसे सहायक माना है, क्योंकि अर्थ मानव जीवन के लिए अत्यावश्यक तत्व है, जिसके द्वारा वह अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाता है। चाणक्य ने इसकी प्रधानता को स्वीकारते हुए कहा है कि– "अर्थ ही धर्म और काम का मूल है और अर्थ वृत्ति या आजीविका से प्राप्त किया जाता है।"[4] अर्थ की व्यापक परिभाषा देतर हुयर वात्सायन ने कहा है कि–

"विद्या–भूमि–हिरण्य–पशु–धन–धान्य भाण्डोपस्कर।
मित्रादिनामर्जनमर्जितस्य च विवर्धनमर्थ।।"[5]

शुक्राचार्य ने भी अर्थ की व्याख्या में उन साधनों को बताया है जिनसे अर्थ प्राप्ति संभव है– "शूरता, दक्षता, बल, धैर्य, मित्र और सहज इनके द्वारा अर्थ की प्राप्ति होती है।"[6]

मानव जीवन अभावग्रस्त या गरीबी में किसी भी मूल्य, आचार, नीति, गुण आदि को तब तक सम्यक रूप से परिपालन नही कर पाता जब तक उसके पास अर्थ न हो। अर्थ की समुचित सबलता उसे स्वयं ही नैतिकता एवं आध्यात्मिकता की और अग्रसर करती है। वह स्वयं अर्थ को साधन रूप में ग्रहण कर मानवीय कामनाओं की पूर्ति कर आत्मचित होने का प्रयास करता है। उपनिषदों में भी अर्थ सम्बन्धित आख्यानों की प्राप्ति हो जाती है, जिसमें कठोपनिषद के 'नचिकेता और मृत्यु' के आख्यान में सारगर्भित रूप में अर्थ का विवेचन किया गया हैद्य अर्थ की प्राप्ति धर्मपूर्वक है। यह अर्थ प्रवृति रूप में मानवीय कामनाओं की पूर्ति करता है तो निवृति रूप में धर्म युक्त होकर आध्यात्मिक एवं पारलौकिक आवश्यकताओं से संबंधित है। भृतहरि अर्थ की महत्ता बतलाते हुए कहा है कि धनी व्यक्ति ही कुलीन, ज्ञानी, पंडित, गुणी वक्त तथा सुंदर माना जाता है। कहा भी गया हैः– "धनात् धर्मः ततः सुखम्" (धन से धर्म और धर्म से सुख मिलता है)। डॉ कपाड़िया के शब्दों में "मानव में प्राप्त करने की प्रवृति का तुष्टिकरण ही अर्थ है।"

अर्थ संप्रत्यय सामान्यतः मनुष्य की इच्छाओं की पूर्ति करने वाला होता है। जिसकी पूर्ति रूप में प्राचीन काल में देवताओं की स्तुतियों की जाती थी। यथा– "रयि दावों दुहितरों विभातिः प्रजावन्तम् यच्छतास्समामु देवीः"।। यहाँ रयि पड़ का अर्थ– 'द्रव', 'धन' के रूप में किया जाता है। अर्थ की महत्ता को तो महाकाव्यों में भी प्रचुरता से निबद्ध किया गया है। महाभारत में अर्थ के विषय में कहा गया है–

"आसीनश्च शयनाश्च विचारन्नपि व स्थितः।
अर्थ योगं दृढं कुर्याद् योगरूच्चावचौरपि।।"

और स्वयं लक्ष्मण ने रामायण में अर्थ के संबंध में कहा है– "जिसके पास अर्थ या धन होता है, उसके लिए धर्म, अर्थ, काम तथा अन्य सभी सहायक होते है, निर्धन के लिए इनको प्राप्त करना कठिन होता है।"

"यस्मार्था धर्मकामार्थः तस्य सर्व प्रदक्षिणम्।
अधेनेनार्थ कामेननार्थः शक्यों विचिन्वता।।"

सामूहिक रूप में सभी विद्वानों के विचार पर अध्ययन किया जाए तो वे सभी 'अर्थ' को केवल धन से न लेकर मनुष्य रूपी जीव की शारीरिक एवं मानसिक कामनाओं की पूर्ति करने वाले साधन के रूप में लेते है, जिसमें धन–धान्य के साथ उनकी पूर्ति कराने वाले भूमि, अश्व, प्राणी–जीव आदि को भी सम्मलित किया गया है। सभी के विचारों में यह 'अर्थ' पुरुषार्थ मात्र पृथक तत्व के रूप में निरूपित नही है अपितु इस पुरुषार्थ की प्राप्ति करने के लिए साधनों का 'धर्म' नामक पुरुषार्थ से मर्यादित होना आवश्यक है। विषय–भोगों की आसक्ति के साथ अर्थ का समायोजन नहीं किया गया है, अपितु धर्म के द्वारा उस इच्छित अर्थ की प्रगति 'मोक्ष' की प्राप्ति की ओर अग्रसर करती है। विशुद्ध हृदय से कामनाओं की पूर्ति पर बल दिया गया है। धर्मशास्त्र के मार्ग पर चलता हुआ मनुष्य रूपी जीव अपनी सच्ची एवं अनिवार्य कामनाओं की पूर्ति अर्थ के द्वारा करे यही उद्देश्य 'अर्थ' पुरुषार्थ का माना गया है।

सतत् बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक नीतियों से बंधा हुआ मानव सृजनात्मक जीवन में वैज्ञानिक स्वेच्छारिता एवं तत्वज्ञान के साथ अर्थ का अर्जन, संग्रहण एवं व्यय करे। गौण रूप में धन संपदा अर्थ से युक्त 'अर्थ' एवं प्रमुख रूप में भूमि, राजस्व आदि अर्थ में निरूपित 'अर्थ' को साध्य 'मोक्ष' का साधन माना गया है। यह धर्मोन्मुख अर्थ एक और तो इहलौकिक कामनाओं की पूर्ति के साधन है तो दूसरी और धर्म के नियमन युक्त अर्थ आध्यात्मिक मुक्ति के साधन रूप में पारलौकिकता की प्राप्ति करने में सहायता प्रदान करता है।

विभिन्न शास्त्रों में इसके संचय का निषेध किया गया है, केवल आवश्यकतानुसार इसका उपार्जन करने को महत्वपूर्ण बताया गया है। यदि कोई व्यक्ति इस अर्थ का आवश्यकता से अधिक संग्रहण करता है तो उसे अनैतिकता के प्रश्रय में रखकर दंड का प्रावधान भी किया गया है। यह दंड व्यवस्था वेद पुराण, उपनिषद, गीता आदि सभी में अनुचित माध्यम से धन का उपार्जन करने के लिए भी प्रदान की जाती थी, क्योंकि तात्कालीन समाज का स्वरूप धर्मोन्मुख था, आध्यात्मिकता पर जोर देने वाला था। अर्थ वह व्यवहार मूल्य है जो मानव जीव के गुणों से स्वरूप साध्य व साधन रूप में परिणत होता रहा है। यह कामना पूर्ति

के लक्ष्य के साथ ही सर्वमान्य मूल्य है। जो व्यक्ति के सर्वकल्याण का माध्यम बनकर उसमे सहयोगिता व सद्भावना जैसे सदगुणों को प्रेषित करता हुआ समाज में एक सम्मानित व अच्छे पद पर प्रस्थापित करता है।

अर्थ का वर्तमान स्वरूप एवं चिंतन –

वर्तमान भारतीय समाज वैश्विकरण की ओर अग्रसर हो रहा है, जहाँ उसके विचारों, मूल्यों, आचार, धर्म, दर्शन आदि में निरंतर परिवर्तन आ रहा है। इस परिवर्तन में पुरुषार्थ चतुष्टय की निर्धारित व्यवस्था में भी निरंतर बदलाव आया है। जहाँ भारतीय सामाज वैदिक काल में धर्म प्रधान, आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर था, वहीं वर्तमान समाज समय–चक्र के अनुरूप परिवर्तित होता हुआ 'अर्थ' के केंद्रीभूत हो गया है। भारतीय धर्म दर्शन परम्परा में पुरुषार्थ चतुष्टय को मानव जीवन को आदर्शमय एवं सोद्देश्य पूर्ण बनाने के लिए एक योजना कर्म में प्रस्तुत किया गया था, परंतु कर्तव्य के रूप में निर्धारित उस क्रम को सर्वदा स्वीकृति प्रदान की जाये आवश्यक नही है, क्योकि उस व्यवस्था का मानव जीव के लिए मर्यादित नही किया गया था। मानव रूपी जीव के बदलते मूल्यों के अनुरूप यह व्यवस्था भी बदली जा सकती है। यह प्रारूप अस्थिर और परिवर्तनशील है, जिसमें मानव के सर्वांगीण एवं सार्वत्रिक एवं प्राकृतिक विकास को ध्यान में रखकर बदलाव किया जा सकता है। संप्रति 'अर्थ' पुरुषार्थ अन्य पुरुषर्थों की अपेक्षा भारतीय सामाजिक व्यवस्था की धुरी है, जिसकी आवश्यकता को किसी भी रूप में नकारा नही जा सकता है। आज के वैश्विकरण एवं औद्यौगिकरण के युग में भारतीय समाज को विश्व के मानस–पटल पर स्वयं को अंकित करने की एक चुनौती है। जिसके लिए वह निरंतर प्रयास भी करता जा रहा है। कहा भी जाता है की किसी समाज की उन्नति का आंकलन उस समाज–विशेष द्वारा अपनाए गए जीवन मूल्यों से होता है। प्राचीन मनीषियों ने शायद इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही पुरुषार्थ चतुष्टय की परिकल्पना की है, जिसमें वर्तमान समाज में 'अर्थ' पुरुषार्थ भारतीय समाज की प्रग्रति का परिचायक बन रहा है। इसके स्वरूप में वर्तमान परिस्थितियों में आमूल–चूल परिवर्तन को देखा जा सकता है। अधुनातन 'अर्थ' केवल धन या द्रव्य के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। जहाँ धन शब्द की व्युत्पत्ति निरुक्तकार के अनुसार – 'धिनोतीति यतः' से है, वह जो सब को तृप्त कर देता है अथवा 'दधन्ति (फलति) इति धनं' से भी जो देता है या फल प्रदायक है वह 'धन' है।

वहीं पुरुषार्थ चतुष्टय में क्रमबद्धता को धारण किये हुये 'अर्थ' की विस्तारिता को कठोपनिषद में सारगर्भित रूप में विवेचन किया गया है– "सौ–सौ वर्ष की आयु वाले पुत्र–पौत्रों को मांग, अनेक पशुओं को मांग, हाथी, सुवर्ण, घोड़े मांग, बड़ी –बड़ी जमीनें –जायदाद मांग, जब तक जीना चाहे तब तक जीवनभोग, धन–धान्य मांग" पर शायद ये परिवर्तन अर्थ विशेष को लेकर देखा जा सकता है, क्योंकि अगर इस 'अर्थ' या धन की प्राप्ति के साधनों की बात की जाये तो आधुनिक चिंतक जिमर का कथनः– "अर्थ के अंतर्गत उन सभी भौतिक वस्तुओं की सम्पूर्ण श्रृंखला का समावेश है, जिन पर अधिकार किया जा सकता है, जिसका आनंद लिया जा सकता है, जो खोई जा सकती है और दैनिक जीवन को घर में प्रबंध, भरण–पोषण, परिवार की समृद्धि और धार्मिक कर्तव्यों के पालन अर्थात् जीवन के विभिन्न उत्तरदायितव्यों को पूर्ण करने के लिए जिनकी आवश्यकता होती है।" यह तात्कालिन और समकालीन 'अर्थ' के स्वरूप में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नही दर्शाता है।

आज अर्थ की प्राप्ति का स्वरूप धर्मोन्मुख साधन से मर्यादित नहीं है। व्यक्ति अपनी आवश्यकता से अधिक अपनी इच्छाशक्ति से एवं सक्षमता से धन का अर्जन एवं संग्रहण कर रहा है। जहाँ 'अर्थ' के प्राचीन स्वरूप में उसका अनुचित उपार्जन एवं संग्रहण दंड के लिए अग्रसर कर देता था वहीं आज यह व्यक्ति–विशेष के जीवन स्तर का मानक बनता जा रहा है। वर्तमान परिदृश्य में यह 'अर्थ' उसकी अभिप्रेरणाओं और उद्देश्यों से संबन्धित है। मोक्ष रूपी साध्य को साधने के लिए अर्थ का परिपालन नहीं किया जा रहा वरन सब प्रकार की अभिवृद्धि तथा समुन्नति को लक्ष्य करके जीवन मूल्यों का सम्पादन किया जा रहा है। जो किसी प्रकार से अनुचित नहीं है, क्योंकि 'अर्थ' ही उस समग्रता को धारण किए हुये है जिससे व्यक्ति के भौतिक कामनाओं की पूर्ति होकर उसके मानस–पटल पर परम तत्व को प्राप्त करने की आभा को प्रकाशित करता है। काल और परिस्थितियों के अनुसार आवश्यकताओं में भी परिवर्तन आया है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। केवल आध्यात्मिकता का साक्षत्कार जीवन मूल्यों का लक्ष्य हमें किसी पिछड़े हुये जगत की ओर धकेलने के लिए काफी है। आवश्यकता ये है 'अर्थ' को नैतिकता

एवं धार्मिक आदर्शों में पिरोकर पुरुष के आत्मोन्नयन में इसे सहायक बनाया जाये। नैतिक सिद्धान्तो से परिष्कृत एवं संवर्धित 'अर्थ' हमें हमारे उद्देश्यों की ओर अग्रसर करने में एक प्रेरक के रूप में दृढ़ता प्रदान करेगा।

जिस प्रकार याज्ञवल्क्य ने छान्दोज्ञयोपनिषद में पुरुषार्थ को सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों का समन्वय बताया है उसी प्रकार वर्तमान परिदृश्य में 'अर्थ' का स्वरूप धनात्मक एवं ऋणात्मक है। भले ही हम इस समय की आवश्यकता के अनुसार 'अर्थ' की ओर केंद्रीभूत होते जा रहे है, पर साथ ही मानव रूपी जीव के नैतिक–आचार में बढ़ता ह्रास, काम के प्रति दोषपूर्ण आकांक्षा, केवल धन में लोलुपता, स्वार्थ एवं काम–मोह आदि अवगुणों की अनदेखी नही की जा सकती, परंतु इन उपेक्षात्मक पक्षों के आधार हम 'अर्थ' की आवश्यकता को नकार नहीं सकते। केवल 'धर्म' के आधार पर इसका सेवन करके वर्तमान गतिमान स्थिति को गतिशीलता प्रदान कर सकते है। इन दोषपूर्ण तथ्यों के द्वारा धारण की गई तटस्थता हमें उभरते वैश्विक पटल से उसी गर्त में ले जायेगा जो की मानते है की भारतीय नीति–मूल्य एवं आचार केवल आध्यात्मिकता से जोड़ते हैय जो पूर्णतयः असत्य है। प्रभुत्व और शक्ति के प्रतीक 'अर्थ' का समन्वयात्मक रूप ही इसका वर्तमान स्वरूप हो सकता है, जिस पर चिंतन करना अत्यावश्यक हो गया है। पुरुषार्थ–चतुष्टय परस्पर विरोधित तत्व नहीं है, जिनका एक साथ ग्रहण नहीं किया जा सकता अपितु इन सभी का संश्लेषण ही विकास है। अनुशासन की भावना से युक्त अर्थ का व्यवाहरिक पक्ष व्यक्ति एवं समाज की उन्नति का प्रमुख कारण रहा है। वर्तमान संदर्भ में 'मोक्ष' के अर्थ को संतुलन प्रदान करना आवश्यक है, जो उसके अर्थ को केवल आध्यात्मिक रूप में परमतत्व की प्राप्ति जैसे संकुचित अर्थ से मुक्त कर, उसे जीवन की शांति, आनन्द, संतुलन– सामञ्जस्य जैसे लक्ष्यों में निबद्ध करना होगा। जिसकी प्राप्ति धन द्वारा संभव है। इस प्रकार 'अर्थ' पुरुषार्थ वर्तमान स्वरूप में भी उसी मोक्ष साध्य का साधन ही है। पुरुषार्थों में सामञ्जस्य रूपता को बनाए रखते हुये अधिक सृजनात्मकता की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. आचार्य, डॉ सन्तोष, (2014), "उपनिषदों का नीति–दर्शन", प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर।
2. कुमार, आशीष, "भारतीय संस्कृति का मूलाधार पुरुषार्थ चतुष्टय", एजुक्रेयशन पब्लिकेशन, छत्तीसगढ़।
3. दास, डॉ भगवान, (1996), "पुरुषार्थ", चौखम्भा विद्या भवन।
4. भटनागर, डॉ सुधा, (1999), "पुरुषार्थ चतुष्टयः", विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली।
5. रानी, डॉ गीता, आ. गिरि, डॉ रघुनाथ, (1983), "धर्मशास्त्रों का समाज–दर्शन", आदर्श विद्या निकेतन, वाराणसी।
6. शर्मा, डॉ मन्जू लाता, (2002), "पुराणों में पुरुषार्थ चतुष्टय", परमिल पब्लिकेशन।
7. मिश्र, डॉ आनन्द, (2010), "पुरुषार्थ : एक पुनर्व्याख्या", 'मूल्य–विमर्श वार्षिक पत्रिका में लेख, मालवीय मूल्य अनुशीलन केंद्र द्वारा प्रकाशित।

Web & bibliography:&

1- https://www-hi-m-wikipedia-org
2- https://www-eÛoticindiaart-com
3- www-Shodhganga-inflibnet-ac-in
4- https://www-jagran-com
5- https://m-facebook-com/bharatasya-bharti/post

मध्यमवर्गीय कामकाजी महिलाओं के शारीरिक एवम् मानसिक स्थिति का उनके जीवन पर प्रभाव : सुल्तानपुर जिले के संदर्भ में

डॉ. बृजेश कुमार पाण्डेय
सहायक आचार्य,
बी.एड विभाग,
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पट्टी,
प्रतापगढ़ – 230001 उ.प्र.

सारांश –

अध्ययन का उद्देश्य सुल्तानपुर जिले के भीतर 35 से 45 वर्ष की महिलाओं के बीच समायोजन, तनाव और मानसिक स्वास्थ्य की गतिशीलता की जांच करना है, जो उनकी वैवाहिक स्थिति और रोजगार की स्थिति पर ध्यान केंद्रित करता है। कामकाजी और गैर–कामकाजी दोनों महिलाओं की जांच करके, यह समझने की कोशिश की जाती है कि ये कारक वैवाहिक जीवन के संदर्भ में उनकी भलाई को कैसे प्रभावित करते हैं।

व्यापक डेटा इकट्ठा करने के लिए शोध में संभवतः सर्वेक्षण, साक्षात्कार और संभवतः मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन जैसी विभिन्न पद्धतियों को नियोजित किया जाएगा। यह काम की जिम्मेदारियों या घरेलू कर्तव्यों को संतुलित करते हुए विवाह के भीतर अपनी भूमिकाओं को प्रबंधित करने में महिलाओं द्वारा अपनाई जाने वाली चुनौतियों और मुकाबला तंत्र का पता लगाएगा।

निष्कर्ष में सुल्तानपुर जिले में महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाले अद्वितीय तनावों के बारे में अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकते हैं, जो हस्तक्षेप और समर्थन के संभावित क्षेत्रों पर प्रकाश डाल सकते हैं। इसके अतिरिक्त, इस जनसांख्यिकीय में मानसिक स्वास्थ्य और समायोजन में योगदान देने वाले कारकों को समझने से समान संदर्भों में महिलाओं की भलाई और वैवाहिक संतुष्टि को बढ़ावा देने के उद्देश्य से नीतियों और कार्यक्रमों को सूचित किया जा सकता है।

मुख्य शब्द– कामकाजी, गैर कामकाजी, समायोजन, तनाव, मानसिक स्वास्थ्य।

प्रस्तावना –

विवाह एक मौलिक सामाजिक संस्था है, जो दुनिया भर में व्यक्तियों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह साहचर्य, भावनात्मक समर्थन और पारिवारिक स्थिरता के लिए आधारशिला के रूप में कार्य करता है। हालाँकि, वैवाहिक जीवन का अनुभव सभी व्यक्तियों के लिए एक समान नहीं होता है, खासकर जब रोजगार की स्थिति और उम्र जैसे कारकों पर विचार किया जाता है। कई अन्य क्षेत्रों की तरह, सुल्तानपुर जिले में, 30 से 45 वर्ष की महिलाएं विविध सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों के बीच वैवाहिक संबंधों की जटिलताओं से खुद को जूझती हुई पाती हैं।

यह अध्ययन सुल्तानपुर जिले में इस आयु वर्ग की कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच समायोजन, तनाव और मानसिक स्वास्थ्य के बीच सूक्ष्म अंतरसंबंध पर प्रकाश डालता है। विशेष रूप से, यह जांच करता है कि एक पत्नी और संभावित रूप से एक पेशेवर होने की दोहरी भूमिकाएं उनके मनोवैज्ञानिक कल्याण और संबंधपरक गतिशीलता को कैसे प्रभावित करती हैं। इस जनसांख्यिकीय पर ध्यान केंद्रित करके, अनुसंधान का उद्देश्य इस संदर्भ में महिलाओं के लिए अद्वितीय चुनौतियों और अनुभवों की गहरी समझ में योगदान करना है।

30 से 45 वर्ष की आयु की महिलाओं पर ध्यान केंद्रित करने का निर्णय जानबूझकर लिया गया है, क्योंकि जीवन का यह चरण अक्सर महत्वपूर्ण व्यक्तिगत और व्यावसायिक परिवर्तनों के साथ मेल खाता

है। इस आयु वर्ग की कई महिलाएं शादी, माता–पिता बनने और करियर में उन्नति की मांगों को संतुलित कर रही हैं, जो उनके मानसिक स्वास्थ्य और वैवाहिक जीवन में समग्र समायोजन पर काफी दबाव डाल सकता है।

इसके अलावा, सुल्तानपुर जिला अपने विविध सामाजिक–सांस्कृतिक परिदृश्य और आर्थिक परिवर्तनशीलता के कारण इस जांच के लिए एक आकर्षक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। संसाधनों तक पहुंच, पारंपरिक लिंग भूमिकाएं और सामुदायिक सहायता प्रणाली जैसे कारक महिलाओं को विवाह के भीतर अपनी भूमिकाओं को समझने और नेविगेट करने के तरीके को प्रभावित कर सकते हैं, जिससे उनके तनाव के स्तर और मानसिक कल्याण पर असर पड़ता है।

कामकाजी और गैर–कामकाजी दोनों महिलाओं के अनुभवों की खोज करके, यह अध्ययन पैटर्न, असमानताओं और हस्तक्षेप के संभावित क्षेत्रों को उजागर करना चाहता है। 35 से 45 वर्ष की आयु की महिलाओं के वैवाहिक जीवन में समायोजन, तनाव और मानसिक स्वास्थ्य के बीच जटिल संबंधों को समझना इस जनसांख्यिकीय की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप लक्षित हस्तक्षेप और समर्थन तंत्र को सूचित कर सकता है।

अंततः, यह शोध समग्र दृष्टिकोण के विकास में योगदान देने का प्रयास करता है जो वैवाहिक जीवन के संदर्भ में महिलाओं की भलाई और लचीलेपन को बढ़ावा देता है, स्वस्थ संबंधों को बढ़ावा देता है और सुल्तानपुर जिले और उसके बाहर मजबूत समुदायों को बढ़ावा देता है।

साहित्य की समीक्षा–

समाज में महिलाओं की भूमिका पर लगातार सवाल उठाए जाते रहे हैं और सदियों से महिलाएं पुरुष प्रधान दुनिया में अपना स्थान पाने के लिए संघर्ष करती रही हैं। साहित्य निश्चित अवधि के दौरान महिलाओं के जीवन, विचारों और कार्यों को एक काल्पनिक रूप में प्रस्तुत करता है, फिर भी अक्सर कई मायनों में सच्चा होता है। हमारे देश की प्रगति में महिलाओं की बहुत बड़ी भूमिका है, क्योंकि महिलाओं का जीवन के साथ मानसिक और शारीरिक संपर्क पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक स्थायी और व्यापक है (बर्नार्ड, 1971)।

कामकाजी महिलाओं के लिए वैवाहिक समायोजन बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत में सत्तावादी पितृसत्तात्मक समाज में महिलाओं की स्थिति और वास्तविकता जीवन में तनाव, चिंता या अवसाद को और बढ़ा सकती है (मुखोपाध्याय और दीवानी, 1976)। जो महिलाएं सामाजिक रूप से वर्णित भूमिकाओं से बाहर निकलती हैं, वे अक्सर अपनी कई भूमिकाओं के कारण तनाव, तनाव, शत्रुता का अनुभव करती हैं। उस स्थिति में, जहां उन्हें जीवनसाथी का समर्थन मिलता है, वह बहुत आरामदायक हो जाता है और उन्हें नौकरी के तनाव से निपटने में मदद मिलती है। इस मामले में, मुकाबला करने की रणनीति बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। करियर और पारिवारिक जिम्मेदारियां अक्सर महिलाओं के लिए परिवार के साथ गुणवत्तापूर्ण समय बिताने या खुद के लिए समय निकालने के लिए बहुत कम समय निकाल पाती हैं। कामकाजी महिलाओं की जिम्मेदारियाँ गैर–कामकाजी महिलाओं की तुलना में कहीं अधिक होती हैं क्योंकि कामकाजी महिलाओं को अपने घरेलू कार्यों और पेशेवर प्रतिबद्धताओं के बीच भी संतुलन बनाना पड़ता है। घरेलू कार्यों के शोध अध्ययनों से पता चला है कि विवाहित महिलाएं अपने रोजगार की स्थिति की परवाह किए बिना अधिकांश कार्यों के लिए जिम्मेदार हैं। इस प्रकार, विवाहित नियोजित महिलाओं को उनकी कार्य भूमिका के लिए सामान्य सामाजिक समर्थन और समर्थन दोनों की आवश्यकता होती है। कामकाजी महिलाओं को कई भूमिकाएँ निभाते समय विभिन्न प्रकार के समायोजन करने पड़ते हैं, जैसे कि घरेलू, सामाजिक, वैवाहिक समायोजन आदि।

व्यवहारिक दृष्टि से सारासन (1980) ने चिंता को कथित धमकी भरे प्रोत्साहन के प्रति एक वातानुकूलित प्रतिक्रिया के रूप में परिभाषित किया है जिसे सीखा जा सकता है या विरासत में प्राप्त किया जा सकता है। बेंजामिन (1987) ने कहा कि चिंता ध्यान, सीखने और परीक्षण से जुड़ सकती है। यह विचार कि चिंता एक छात्र की सीखने की क्षमता को प्रदर्शित करने की क्षमता के साथ हस्तक्षेप कर सकती है, कोई नई बात नहीं है। चिंता सीखने के साथ भी हस्तक्षेप कर सकती है क्योंकि चिंतित छात्र

हाथ में काम के अप्रासंगिक या आकस्मिक पहलुओं से अधिक आसानी से विचलित हो जाते हैं, और महत्वपूर्ण विवरणों पर ध्यान केंद्रित करने में परेशानी होती है।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन –

विवाह समायोजन जितना दिखाई देता है उससे अधिक जटिल लगता है। मूल रूप से, विवाह में, दो व्यक्ति एक–दूसरे की संवेदी, मोटर, भावनात्मक और बौद्धिक क्षमताओं के साथ तालमेल बिठाते हैं। व्यक्तित्व के स्तर पर उन्हें अपने संपूर्ण वातावरण में एक साथ तालमेल बिठाना होगा, जिसमें नया घर, बच्चे, भोजन की व्यवस्था और तैयारी, रिश्तेदार, दोस्त, रिश्ते और काम (फोंसेका, 1966) जैसे मामले शामिल हैं। वैवाहिक जीवन की सफलता काफी हद तक पति–पत्नी द्वारा वैवाहिक समायोजन में सफलता पर निर्भर करती है। विवाह कुसमायोजन के परिणामस्वरूप संघर्ष और तनाव होता है और कई बार तलाक हो जाता है। कई अध्ययनों ने कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं में विवाह समायोजन का अध्ययन किया है। उदाहरण के लिए, नाथावत और माथुर (1993) ने पाया कि कामकाजी महिलाओं ने गृहिणियों की तुलना में बेहतर वैवाहिक समायोजन और व्यक्तिपरक कल्याण की सूचना दी; उन्होंने सामान्य स्वास्थ्य, जीवन संतुष्टि और आत्म–सम्मान के मानकों में भी गृहिणियों की तुलना में अधिक अंक प्राप्त किए। इलॉयड (1980) ने पाया कि सामाजिक आर्थिक स्थिति विवाह समायोजन में एक योगदान कारक है, और उनका मानना है कि उच्च आय एक महत्वपूर्ण कारक है। इसी तरह के निष्कर्षों का समर्थन एडेगोके (1987) और रोजर्स और मे (2003) ने किया है जिन्होंने बताया कि कामकाजी वर्ग की महिलाएं आम तौर पर गैर–कामकाजी महिलाओं की तुलना में अपने जीवन से अधिक संतुष्ट हैं। हालाँकि, इन निष्कर्षों के बीच अंतर को सांस्कृतिक मतभेदों के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। हालाँकि, कुछ अध्ययनों ने विरोधाभासी निष्कर्षों की सूचना दी है। कौसर (2003) ने कामकाजी महिलाओं में विवाह समायोजन पर व्यक्तित्व लक्षण और सामाजिक–आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि निम्न, मध्यम और उच्च सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि की कामकाजी महिलाओं के विवाह समायोजन में कोई अंतर नहीं है और उन्होंने कहा कि व्यक्तित्व गुण इसका कारक हो सकता है। कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं में विवाह समायोजन के लिए सामाजिक–आर्थिक कारक जिम्मेदार है। पोर्ट हरकोर्ट महानगर की कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं में समान गैर–महत्वपूर्ण विवाह अंतर नाइजीरिया–तमुनोइमामा जामाबो और ओरडु (2012) द्वारा रिपोर्ट किया गया था।

तेजी से बढ़ते औद्योगीकरण, शहरीकरण और व्यावसायीकरण के आधुनिक युग में जहां दैनिक दिनचर्या अत्यधिक काम के बोझ के साथ निर्धारित की जा रही है, और इसे चलाने में बहुत व्यस्तता है, चिंता और तनाव जैसी अन्य समस्याएं बढ़ रही हैं। ये आधुनिक जीवन की विशेषताएं बन गई हैं जो हमारी जीवनशैली में बाधा डाल रही हैं और कुछ घटनाओं में बदलाव ला रही हैं। चिंता का संबंध लिंग, आयु, सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि और सामाजिक–आर्थिक स्थिति, शैक्षिक पृष्ठभूमि, जीवन संतुष्टि आदि से हो सकता है। चिंता दुनिया भर में स्कूली बच्चों और किशोरों में सबसे आम मनोवैज्ञानिक विकारों में से एक है (कोस्टेलो एट अल।, 2003)). प्रसार दर 8.0% की औसत दर के साथ 4.0% से 25% तक है (बर्नस्टीन और बोरचर्ड, 1991; बोड एट अल., 2000)।

चिंता को संपूर्ण संस्कृति में मौजूद एक सार्वभौमिक घटना माना जाता है, हालांकि इसके संदर्भ और अभिव्यक्तियाँ सांस्कृतिक मान्यताओं और प्रथाओं से प्रभावित होती हैं (क्लेनमैन, 1985; ग्वारनाकिया, 1997)। अवसाद पर नैदानिक फोकस के बावजूद, युवा चिंता विकार भी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे अवसाद के बाद के विकास के अग्रदूत हैं (चाविरा एट अल।, 2004)।

वैवाहिक समायोजन –

वैवाहिक समायोजन को "एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया गया है जिसमें पति और पत्नी को अपने विवाह और एक–दूसरे के साथ खुशी और संतुष्टि की व्यापक भावना होती है। वैवाहिक समायोजन को उस स्थिति के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें पति और पत्नी में आमतौर पर खुशी और संतुष्टि की भावना होती है।" और पत्नी और एक–दूसरे के साथ। जीवनसाथी की वृद्धि और विकास को स्वीकार करने और समझने में परिपक्वता की आवश्यकता होती है। यदि यह प्रगति वास्तविक और अनुभवी नहीं है, तो वैवाहिक संबंध में मृत्यु अपरिहार्य है (हाशमी एट अल।, 2007)।

तनाव को आंतरिक या बाहरी तनावों के प्रति शारीरिक या मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है। तनाव शरीर की अधिकांश प्रणालियों में परिवर्तन का कारण बनता है, जिससे लोग कैसा महसूस करते हैं और कैसे व्यवहार करते हैं, उसे प्रभावित करता है (हंस सेली, 1936)। तनाव को उस स्तर के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिस हद तक व्यक्ति असहनीय दबावों के परिणामस्वरूप अभिभूत या सामना करने में असमर्थ महसूस करता है। तनाव आधुनिक जीवन का एक हिस्सा है, जीवन की बढ़ती जटिलता के साथ तनाव बढ़ने की संभावना है। तनाव भूमिका की अवधारणा में निर्मित होता है, जिसकी कल्पना एक प्रणाली में एक महिला की स्थिति के रूप में की जाती है। महिलाएं केवल गृहिणी बनने तक ही सीमित नहीं हैं, वह अब कामकाजी महिला की भूमिका निभाकर घर और कार्यस्थल दोनों जगह अपनी भागीदारी दे रही हैं। भारतीय समाज कुछ चीजों में बदलाव को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है, अभी भी पारंपरिक सोच है जैसे महिला केवल गृहिणी है। इस प्रकार की सोच महिलाओं के लिए दैनिक जीवन को और अधिक चुनौतीपूर्ण बना देती है जब वह अपना करियर वह काम शुरू करती है जिसे वह करना पसंद करती है। एक महिला होने के नाते उन्हें अपनी निजी और प्रोफेशनल जिंदगी में कई बाधाओं का सामना करना पड़ता है। उसे अपने काम और घर के बीच संतुलन बनाना पड़ता है, जो करना आसान काम नहीं है। इस प्रकार की चीज़ें उसे अशांत, थका हुआ, निराश कर देती हैं और भूल जाती हैं कि वह वास्तव में क्या है? वह एक ही दिन में नौकरी, घर और कई कर्तव्यों के बीच संतुलन बनाने के परिदृश्य से तनावग्रस्त थी (हाशमी एट अल., 2007)।

अवसाद –

अवसाद एक सामान्य और गंभीर चिकित्सीय बीमारी है जो व्यक्ति के महसूस करने, सोचने और कार्य करने के तरीके पर नकारात्मक प्रभाव डालती है (एपीए, 2013)। अवसाद एक मनोदशा विकार है जो लगातार उदासी की भावना और रुचि की हानि का कारण बनता है। एक मामला सामने आया है जिसमें महिलाओं ने गतिविधि का क्षेत्र बदल दिया। वह घर की दहलीज से बाहर निकलीं और पुरुष की तरह सेवा में जुट गईं। अब उसे प्रशंसा, समानता और अवसर मिला। हालाँकि, उत्साह क्षणभंगुर था, क्योंकि उससे यह काम भी करने की उम्मीद थी। उसे घरेलू ज़िम्मेदारियों में कमी की उम्मीद नहीं थी। इसके परिणामस्वरूप तनाव और अवसाद उत्पन्न हुआ (पिल्लई और सेन, 1998)।

दलील –

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं की वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद से जुड़ी समस्याओं पर हमारे संदर्भ में कम चर्चा की गई है। यह अध्ययन कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के सामने आने वाली कठिनाइयों को जानने में सहायक होगा। हमारा समाज पुरुष प्रधान समाज होने के कारण महिलाओं को तमाम समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यदि वे कामकाजी हैं तो उनसे कार्यालय के साथ–साथ घर पर भी सभी कर्तव्य निभाने की अपेक्षा की जाती है (डैंडोना, 2013)। हाशमी, खुर्शीद और हसन (2007) ने वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद पर एक अध्ययन किया। अध्ययन में 150 विवाहित महिलाओं को शामिल किया गया, जो कामकाजी और गैर–कामकाजी दोनों थीं, डायडिक एडजस्टमेंट स्केल (2000), बेक डिप्रेशन इन्वेंटरी (1996) और स्ट्रेस स्केल (1991) के उर्दू अनुवाद का उपयोग किया गया था। परिणामों ने वैवाहिक समायोजन, अवसाद और तनाव के बीच अत्यधिक महत्वपूर्ण संबंध का संकेत दिया। शिक्षित कामकाजी और गैर–कामकाजी विवाहित महिलाओं की तुलना में, निष्कर्ष दर्शाते हैं कि उच्च शिक्षित कामकाजी और गैर–कामकाजी विवाहित महिलाएं अपने विवाहित जीवन में अच्छा कर सकती हैं और अवसाद से मुक्त हैं (डैंडोना, 2013)।

व्यास (2019)। कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच चिंता, अवसाद और तनाव के स्तर की जांच की। यह उम्मीद की गई थी कि कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच चिंता, अवसाद और तनाव के स्तर में काफी अंतर होगा। यादृच्छिक नमूनाकरण तकनीकों का उपयोग करते हुए, शोधकर्ता ने वर्तमान अध्ययन के लिए 30 से 40 वर्ष की आयु सीमा में 60 कामकाजी और 60 गैर–कामकाजी महिलाओं का चयन किया। चिंता, अवसाद और तनाव पैमाने का उपयोग किया गया; इसे भटनागर एट अल द्वारा विकसित किया गया था। (2011). यह पाया गया कि निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति वाली कामकाजी महिलाओं में गैर–कामकाजी महिलाओं की तुलना में चिंता, तनाव और अवसाद के लक्षण अधिक

थे; हालाँकि उच्च सामाजिक–आर्थिक स्थिति वाली महिलाओं के बीच कामकाजी और गैर–कामकाजी स्थितियों के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं था।

गुप्ता और दामोदर (2020) ने कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच मनोवैज्ञानिक संकट के स्तर की जांच की। इस अध्ययन में महिलाओं की कार्य स्थिति (कामकाजी और गैर–कामकाजी) के अनुसार मनोवैज्ञानिक संकट के स्तर और मानसिक विकार के प्रति उनकी संवेदनशीलता की पहचान करने की कोशिश की गई। इस अध्ययन का उद्देश्य अविवाहित कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच मनोवैज्ञानिक संकट के स्तर में अंतर निर्धारित करना है। अध्ययन में कोलकाता और बेंगलुरु की 23–30 वर्ष की आयु सीमा वाली 144 अविवाहित महिलाओं ने भाग लिया। केसलर साइकोलॉजिकल डिस्ट्रेस स्केल (झ10, 2002) का उपयोग करके डेटा एकत्र किया गया था।

दोनों समूहों के बीच मनोवैज्ञानिक संकट में अंतर निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र नमूना टी–परीक्षण का उपयोग किया जाता है। निष्कर्षों के अनुसार, कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं द्वारा अनुभव किए जाने वाले मनोवैज्ञानिक संकट के स्तर में कोई सांख्यिकीय महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

उद्देश्य –

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव, अवसाद का अध्ययन करना।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और तनाव के बीच संबंधों का अध्ययन करना।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और अवसाद के बीच संबंधों का अध्ययन करना।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद के बीच अंतर को समझना।

परिकल्पना –

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं होगा।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच तनाव में कोई खास अंतर नहीं होगा।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच अवसाद में कोई खास अंतर नहीं होगा।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और तनाव के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं होगा।

कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और अवसाद के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं होगा।

तरीका –

डिज़ाइनः महिलाओं की श्रेणी, यानी कामकाजी और गैर–कामकाजी को स्वतंत्र चर के रूप में लिया गया और आश्रित चर के समूह में उनके बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव, अवसाद शामिल थे। यह देखने के लिए कि क्या कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन तनाव और अवसाद के बीच कोई संबंध था, एक सहसंबंधी शोध डिजाइन का उपयोग किया गया था। इसके अलावा, कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद में अंतर का आकलन करने के लिए एक समूह–समूह अनुसंधान डिजाइन भी लागू किया गया था।

नमूनाः इस अध्ययन में उद्देश्यपूर्ण नमूनाकरण विधि का उपयोग किया गया था। नमूने में सुल्तानपुर जिले की 30 से 45 वर्ष की आयु सीमा वाली 120 महिलाएं शामिल थीं, जिनमें से 60 कामकाजी थीं और 60 गैर–कामकाजी थीं। नमूना विभिन्न धार्मिक परिवार प्रकार, निवास क्षेत्र से संबंधित था।

समावेशन/बहिष्करण मानदंड –

प्रतिभागियों की ऑनलाइन भाग लेने की इच्छा, अन्यथा बाहर रखा गया
आयु सीमा 30 से 45 वर्ष, अन्यथा बाहर
जिन लोगों ने भागीदारी के लिए सहमति दी है, अन्यथा बाहर रखा गया है

टूल्स –

सामाजिक–जनसांख्यिकीय डेटाः सामाजिक–जनसांख्यिकीय डेटा जिसमें नाम, आयु, लिंग, सामाजिक आर्थिक स्थिति, निवास स्थान, परिवार का प्रकार और धर्म शामिल थे, एकत्र किए गए।

वर्तमान अध्ययन में शामिल चर को मापने के लिए निम्नलिखित मनोवैज्ञानिक उपकरणों का भी उपयोग किया गया था। सभी पैमाने मनोवैज्ञानिक रूप से संतोषजनक हैं।

वैवाहिक समायोजन पैमाना (लॉक–वालेस, 1959): यह वैवाहिक संतुष्टि को मापने के लिए 15–आइटम पैमाना है। इसका उपयोग अच्छी तरह से समायोजित जोड़ों को संकटग्रस्त जोड़ों से अलग करने के लिए किया गया था। 15 आइटमों का उत्तर विभिन्न प्रतिक्रिया पैमानों पर दिया जाता है।

पर्सिव्ड स्ट्रेस स्केल (कोहेन, कामार्क और मर्मेलस्टीन, 1983): पर्सिव्ड स्ट्रेस स्केल (पीएसएस) उस डिग्री का 14–आइटम माप है जिसके द्वारा किसी के जीवन में स्थितियों को तनावपूर्ण माना जाता है। बेक डिप्रेशन इन्वेंटरी (बेक, 1988): बीडीआई किशोरों और वयस्कों में अवसाद की गंभीरता को मापने वाली एक व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली 21–आइटम स्व–रिपोर्ट सूची है।

प्रक्रिया –

प्रतिभागियों को ऑनलाइन माध्यम से अध्ययन का उद्देश्य समझाया गया और अध्ययन में भाग लेने की उनकी इच्छा का पता लगाया गया। सामाजिक–जनसांख्यिकीय डेटा, वैवाहिक समायोजन (लॉक–वालेस, 1959), कथित तनाव स्केल (कोहेन एटल, 1983), बेक डिप्रेशन इन्वेंटरी (आरोन टी.बेक (संशोधित संस्करण), 1988) प्रतिभागियों को ऑनलाइन दिए गए थे। एक के बाद एक उचित निर्देश। प्रतिभागियों से प्रतिक्रियाएँ एकत्र की गईं। तीन मूल्यांकनों के लिए स्कोरिंग की गई और मैनुअल के अनुसार व्याख्या की गई।

नैतिक मुद्दे –

एकत्रित किए गए डेटा का उपयोग केवल शोध उद्देश्य के लिए किया गया है।
प्रत्येक प्रतिभागी की सूचित सहमति प्राप्त की गई।
पूरे अध्ययन के दौरान प्राप्त जानकारी की गोपनीयता बनाए रखी गई है।

डेटा का विश्लेषण –

डेटा का विश्लेषण करने के लिए माध्य, मानक विचलन, एक तरफ़ा एनोवा और पियर्सन उत्पाद क्षण सहसंबंध विधियों का उपयोग किया गया था। सांख्यिकीय विश्लेषण सामाजिक विज्ञान के लिए सांख्यिकीय पैकेज (एसपीएसएस) संस्करण 21 का उपयोग करके किया गया था।

परिणाम –

तालिका 1 कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव, अवसाद का औसत और मानक विचलन दर्शाती है। वैवाहिक समायोजन पैमाने पर गैर–कामकाजी महिलाओं का औसत 20.18 है, जबकि कामकाजी महिलाओं का औसत 15.08 है। इसलिए, गैर–कामकाजी महिलाओं में कामकाजी महिलाओं की तुलना में वैवाहिक समायोजन अधिक होता है। तनाव पैमाने पर गैर–कामकाजी महिलाओं का औसत 15.93 है, जबकि कामकाजी महिलाओं का औसत 20.70 है। इस प्रकार, कामकाजी महिलाओं में तनाव का स्तर अधिक होता है। अवसाद पर गैर–कामकाजी महिलाओं का औसत स्कोर 12. 81 है जबकि कामकाजी महिलाओं का औसत स्कोर 31.40 है। इसलिए, कामकाजी महिलाओं में अवसाद का स्तर अधिक दिखा।

तालिका 1, कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद के पैमाने पर माध्य और एसडी।

वर्ग		N	M	SD
वैवाहिक समायोजन	गैर कार्यरत	60	20-1833	3.65686
	कार्यरत	60	15-0833	4.79156
	कुल	120	17.6333	4.95684
Stress	गैर कार्यरत	60	15.9333	5.31983
	कार्यरत	60	20.7000	4.62235
	कुल	120	18.3167	5.50932
Depression	गैर कार्यरत	60	12.8167	12.75385
	कार्यरत	60	31.4000	10.78323
	कुल	120	22.1083	15.01193

वैवाहिक समायोजन पर महत्वपूर्ण मूल्य .000 है और संगत एफ मान 42.954 है जो महत्व के 0.05 स्तर पर महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, शून्य परिकल्पना 1 अस्वीकार कर दी जाती है। इस प्रकार कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन में महत्वपूर्ण अंतर है। तनाव पर महत्वपूर्ण मान .000 है और संगत थ मान 27.448 है जो 0.05 के महत्व के स्तर पर महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, शून्य परिकल्पना 2 खारिज हो जाती है, इसलिए, कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच तनाव में महत्वपूर्ण अंतर है। अवसाद पर महत्वपूर्ण मान .000 है और अनुरूप एफ मान 74.283 है जो 0.05 महत्व के स्तर पर महत्वपूर्ण है। अतः शून्य परिकल्पना 3 अस्वीकार की जाती है। कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं में अवसाद में महत्वपूर्ण अंतर है।

तालिका 2 कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन तनाव और अवसाद पर एकतरफा एनोवा दिखाती है

	वर्ग	SS	DF	MS	F	Sig
वैवाहिक समायोजन	समूह के बीच	780.300	1	780.300	42.954	.000
	समूह के भीतर	2143.567	118	18.166		
	कुल	2923.867	119			
तनाव	समूह के बीच	681.633	1	681.633	27.448	.000
	समूह के भीतर	2930.333	118	24.833		
	कुल	3611.967	119			
अवसाद	समूह के बीच	10360.208	1	1036.208	74.283	.000
	समूह के भीतर	16457.383	118	139.469		
	कुल	26817.592	119			

तालिका 3: वैवाहिक समायोजन तनाव और अवसाद पर सहसंबंधगुणांक मूल्य

		तनाव	वैवाहिक समायोजन	अवसाद
तनाव	पियसेन सह–संबंध	1	-.200*	.554**
	Sig.(2-tailed)		0.28	.000
	N	120	120	120
वैवाहिक समायोजन	पियसेन सह–संबंध	-.200*	1	-.464**
	Sig.(2-tailed)	.028		.000
	N	120	120	120
अवसाद	पियसेन सह–संबंध	.554**	-.464**	1
	Sig.(2-tailed)	.000	.000	
	N	120	120	120

तालिका 3 वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद जैसे चरों के बीच संबंध को दर्शाती है। कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और तनाव के बीच सहसंबंध गुणांक –0.200 है जो 0.05 पर महत्वपूर्ण है। परिकल्पना 4 अस्वीकृत की जाती है।

वैवाहिक समायोजन और तनाव के बीच एक नकारात्मक संबंध है। कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और अवसाद के बीच सहसंबंध गुणांक –0.464 है, जो 0.05 पर महत्वपूर्ण है। परिकल्पना 5 को अस्वीकार कर दिया गया है, क्योंकि वैवाहिक समायोजन और अवसाद के बीच एक नकारात्मक संबंध है।

परिणाम –

यह अध्ययन कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद का पता लगाने और वैवाहिक समायोजन और तनाव और अवसाद के बीच संबंधों की जांच करने के लिए आयोजित किया गया था। दोनों समूह तीनों पैमानों पर काफी भिन्न थे, जिससे पता चलता है कि कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं को अलग–अलग मनोवैज्ञानिक स्थितियों का सामना करना पड़ता है जो दोनों समूहों के जीवन को अलग–अलग तरीके से प्रभावित करते हैं। इस पर स्वयं और उनके जीवन के संबंधित पक्षों को भी ध्यान देने की आवश्यकता है। उनके लिए इस तरह के सुविधाजनक प्रयासों से उनकी भलाई और जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि होने की उम्मीद है। इस अध्ययन के निष्कर्ष गुप्ता और दामोदर (2020) के परिणामों के विपरीत हैं, जिन्होंने संकट के पैमाने पर ऐसे समूहों के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया। लेकिन, इस अध्ययन के निष्कर्ष कुछ अन्य संबंधित अध्ययनों (जैसे व्यास, 2019; हाशमी, खुर्शीद और हसन, 2007) को अनुभवजन्य समर्थन प्रदान करते हैं। अतः महिलाओं की कामकाजी स्थिति से संबंधित समस्याओं पर उचित ध्यान देने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष –

वर्तमान अध्ययन में प्राप्त परिणामों से कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद में महत्वपूर्ण अंतर सामने आया। वैवाहिक समायोजन और तनाव के बीच और महिलाओं के दो समूहों के बीच वैवाहिक समायोजन और अवसाद के बीच महत्वपूर्ण संबंध है। कामकाजी महिलाओं की तुलना में गैर–कामकाजी महिलाओं में वैवाहिक समायोजन का स्तर उच्च होता है। कामकाजी महिलाएं गैर–कामकाजी महिलाओं की तुलना में उच्च स्तर के तनाव और अवसाद का अनुभव करती हैं। कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और तनाव के बीच एक नकारात्मक संबंध है। कामकाजी और गैर–कामकाजी महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन और अवसाद के बीच एक नकारात्मक संबंध है।

संदर्भ सूची –

1. अमेरिकन साइकियाट्रिक एसोसिएशन। मानसिक विकारों की नैदानिक और सांख्यिकी नियम – पुस्तिका
2. (डीएसएम–5), पांचवां संस्करण.2013।
3. बर्नार्ड, जे. (1984). कार्य और परिवारः पुरुषों और महिलाओं की बदलती भूमिकाएँ। पालो ऑल्टो, सीएः मेफ़ील्ड।
4. रक्त, आर.ओ. (1960)। वोल्फ डीएम. पति और पत्नियाँ. न्यूयॉर्क ।
5. ब्रैडबरी, टी.एन., और फिंचम, एफ.डी. (1990)। विवाह में जिम्मेदारियाँः समीक्षा और समालोचना। मनोवैज्ञानिक बुलेटिन।
6. कैंपबेल, ए., कॉनवर्स, पी.ई. और रोजर्स, डब्ल्यू.एल. (1976)। अमेरिकी जीवन की गुणवत्ता. न्यूयॉर्कः रसेल सेज फाउंडेशन।
7. डालैक, जी.डब्ल्यू. (1990)। हृदय रोग और भावात्मक विकार के बीच संबंध पर परिप्रेक्ष्य। द जर्नल ऑफ़ क्लिनिकल साइकिएट्री. 57,4–9 ।
8. डंडोना, ए. (2013)। कामकाजी और गैर–कामकाजी विवाहित महिलाओं के वैवाहिक समायोजन और अवसाद पर अध्ययन। शिक्षा, विकास, समाज और प्रौद्योगिकी के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, 1 (1), 46–51।
9. फ्रोन, एम. (2003)। कार्य–परिवार संतुलन. व्यावसायिक स्वास्थ्य मनोविज्ञान की पुस्तिका। द्वारा संपादितः क्विक जे, टेट्रिक एलई। वाशिंगटन, डीसीः अमेरिकन साइकोलॉजिकल एसोसिएशन।
10. गुप्ता ए. और दामोदर एस. (2020)। कामकाजी और गैर–कामकाजी लोगों के बीच मनोवैज्ञानिक संकट का स्तर ।

11. औरत। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी, 8(4), 1513–1521। डीआईपीः18.01. 164 / 20200804, डीओआईः10.25215 / 0804.164
12. हाशमी, एच. ए., खुर्शीद, एम. 8सी हसन, आई. (2007)। कामकाजी और गैर–कामकाजी विवाहित महिलाओं के बीच वैवाहिक समायोजन, तनाव और अवसाद। इंटरनेट जर्नल ऑफ मेडिकल अपडेट, 2, (1), 19–26.
13. इसाबेइले, एफ., मैथियास, एन., हंस–मार्टिन, एच., श्वप्पाच, डी. और रीगर, एम.ए. (2008)। जर्मन अस्पताल चिकित्सकों में काम करने की स्थितियाँ और कार्य–परिवार संघर्षः मनोसामाजिक और संगठनात्मक भविष्यवक्ता और परिणाम। बीएमसी पब्लिक हेल्थ, 8, 353कवपः10. 1186 / 1471–2458–8–353।
14. एमके, आर., और कौर, पी. (2020)। महिलाओं में अवसाद, चिंता, तनाव और वैवाहिक समायोजन। जर्नल ऑफ़ इंटरनेशनल वुमेन स्टडीज़, 21(5), 2–8.
15. निबलिंग, एम., स्टोबेल, यू., हैसलहोम। एच., माइकलिस, एम. और हॉफमैन, एफ. (2006)। काम पर मनोवैज्ञानिक तनाव और तनाव को मापनाः जर्मनी में ब्व्ैव्फ प्रश्नावली का मूल्यांकन। जीएमएस साइकोसोक मेड., 3.
16. पाल, एस. और साक्सविक, पी. (2008)। एक अंतर–सांस्कृतिक अध्ययन में नौकरी के तनाव के पूर्वसूचक के रूप में कार्य–परिवार संघर्ष और मनोसामाजिक कार्य वातावरण तनाव। तनाव प्रबंधन के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, 15, 22–42
17. व्यास. आर (2019)। कामकाजी और गैर–कामकाजी लोगों के बीच चिंता, अवसाद और तनाव का स्तर
18. वूमेन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी, 7(3), 801–806। डीआईपीः18.01. 087 / 20190703, डीओआईः10.25215 / 0703.087
19. व्हिल्हेम, के. और रॉय, के. (2003)। अवसाद जोखिम और मुकाबला कारक में लिंग अंतर एक नैदानिक नमूना. अधिनियम मनोरोग एक स्कैंडियनिक। 106, 45–531.

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–45, वर्ष–2022 (अप्रैल–जुलाई, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.5

समकालीन काव्य में प्रजातांत्रिक मूल्यों की अभिव्यक्ति

डॉ. लालचंद सिन्हा
सहायक प्राध्यापक (हिंदी)
शासकीय नवीन महाविद्यालय ठेलकाडीह,
जिला –खैरागढ़–छुईखदान–गंडई (छ.ग.)

''अंधकार है वहॉ जहॉ आदित्य नहीं है। मुर्दा है वह देष जहॉ साहित्य नहीं है।'' कहकर किसी कवि ने साहित्य की महिमा और महत्ता का सुंदर प्रतिपादन किया है। किसी भी देष की सभ्यता ,संस्कृति तथा मानवीय मूल्यों की प्रतिस्थापना के स्तर का आकलन करना है तो उस देष में सृजित साहित्य का अवलोकन आवष्यक है। इसीलिए पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने साहित्य को 'समाज का दर्पण ' कहा है। व्यक्ति और समाज के जीवन में समय–समय पर जो घटता है उसी की कलापरक अभिव्यक्ति को साहित्य की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। सजृन चाहे कला का हो या साहित्य का, उसमें बेहतर समाज की कल्पनात्मक अवधारणाएॅ तो होती है। सामाजिक सत्य के विकासगामी तत्त्वों के भीतर सृजनात्मक कल्पना का जन्म होना होता है। साहित्य और समाज का गहरा संबंध है। इसीलिए पाष्चात्य साहित्यकार **मैथ्यू अर्नाल्ड** ने साहित्य को जीवन की आलोचना कहा है। इस संबध में **मुक्तिबोध** का विचार है कि '' साहित्य का अध्ययन एक प्रकार से मानव सत्ता का अध्ययन है। अतएव जो लोग ऊपरी तौर पर साहित्य का ऐतिहासिक विहंगावलोकन अथवा समाजश्षास्त्रीय निरीक्षण कर चुकने में ही अपनी इति कर्तव्यता समझते हैं,वे भी एकपक्षीय अतिरेक करते हैं।''1

प्रत्येक काल का साहित्य अपने युग–परिवेष से अनुस्युत रहता है। कारण चेतना के तत्त्व बदलते ही उसकी अभिव्यक्ति का स्वरूप भी बदल जाता है। क्योंकि स्वयं चेतना मानवीय संबंधों में परिवर्तन उपस्थित होते ही बदल जाता है। अतः प्रत्येक कालावधि में प्रणीत साहित्य में तद्युगीन समाज का दर्षन होता है।

'सर्वे भवन्तु सुखिनः' और 'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुंबकम्' की महान भावना में भारतीय जीवन–दर्षन ने अभिव्यक्ति पायी है। यही तत्त्व इसकी सांस्कृतिक गौरव का उत्स है। इसी कारण इसकी सभ्यता सदैव सजीव रही है। ''सांई के सब जीव है कीरी कुंजर दोय'' और ''ईष्वर अंष जीव अविनासी'' कहकर कबीर और तुलसीदास प्रभृति संत महात्माओं ने समस्त जीवों में समत्व भाव का प्रतिष्ठापन किया है। यही समत्व भाव आधुनिक भारतीय जीवन में लोकतांत्रिक मूल्यों के रूप में साकार हो उठा है। राजनीतिक दृष्टि से भारतवर्ष आज विष्वपटल पर सबसे वृहद लोकतांत्रिक देष है।

प्रजातंत्र अंग्रेजी शब्द **'डेमोक्रेसी'** का हिन्दी अनुवाद है। 'डेमोक्रेसी' शब्द ग्रीक भाषा के दो शब्दों 'डेमोस' तथा 'क्रेटोस' से मिलकर बना है। जिसका क्रमशः अर्थ जनता तथा षक्ति है। प्रजातंत्र, लोकतंत्र अथवा जनतंत्र का अर्थ जनता का षासन है जिसमें षासन षक्ति एक विषेष वर्ग या वर्गों में निहित न रहकर समाज के सदस्यों में निहित होती है।

हिन्दी साहित्य में लोकतांत्रिक मूल्यों की अभिव्यक्ति नितांत रूप से नवीन नहीं है।संदर्भ विषेष में काव्य साहित्य पर दृष्टिपात करें तो अंतश्चेतना के स्तर पर इसकी व्यापक अभिव्यंजना हुई है। संत शिरोमणि एवं लोकनायक **गोस्वामी तुलसीदास जी** का 'श्रीरामचरित मानस' समग्रतः लोकतांत्रिक मूल्यों की जीवंत अभिव्यक्ति है। जहॉ वे सच्चे प्रजापालक राजा का स्वरूप षारीरिक अवयव रूपी प्रजा का समभाव से पालने–पोषने वाला मुख के समान स्थापित करते हुए मानस में – **''मुखिया मुख सो चाहिए, खान पान को एक। पालइ पोषइ सकल अंग,तुलसी सहित विवेक।।''2** लिखते हैं वहीं प्रजा को कष्ट पहुॅचाने वाले राजा को भयंकर परिणामों के प्रति चेतावनी यह कहकर भी दी है– **'' जासू राज प्रिय प्रजा दुखारी,सो नृप अवसि नरक अधिकारी।।''** उनके द्वारा परिकल्पित रामराज्य ऐसे लोकचारित्र्य से युक्त है जहॉ सभी मानव को जीवन और जगत पर समान रूप से अधिकार है। जहॉ **''दैहिक दैविक भौतिक तापा, राम राज नहिं काहुहि व्यापा।''।**

इस धरा पर श्रीरामजी के अवतरण के मूल में सज्जनों की पीड़ा हरना और जनतंत्र की स्थापना करना रहा है। इसलिए उनके जीवन की अभिव्यक्ति लोकरक्षक तथा लोकतंत्र प्रतिस्थापक रूप के बिना

नहीं हो सकती। राष्ट्रकवि **मैथिलीषरण गुप्त जी** ने साकेत में जन–मन को ईष्वरत्व प्रदान करना और लोकतंत्र को महिमा मंडित करना अपने अवतरण का हेतु प्रकट करते हुए स्वयं राम से यह कहलवाया है कि – **''भव में नव वैभव व्याप्त कराने आया/नर को ईष्वरता प्राप्त कराने आया/ संदेश यहॉ मैं नहीं स्वर्ग का लाया/इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।।''3**

आज का मानव समाज अनेक विसंगतियों,अंतरविरोधों, मान्यताओं और सिद्धांतों से जकड़ा हुआ है। फलतः मानवीय जीवन जटिल और संघर्षमय हो गया है। इसके मूल कारण में समत्व का अभाव है। संघर्ष के कारण और समाधान के विषय में गंभीर चिंतन करते हुए राष्ट्रीय विचारधारा के महान कवि **श्री रामधारी सिंह 'दिनकर'जी** लिखते हैं –

'' जब तक मनुज मनुज का सुख भाग नहीं सम होगा/षमित न होगा कोलाहल , संघर्ष नहीं कम होगा।।''4

विषमता की पीड़ा से सकल विष्व स्पंदित है और समरसता की प्रतिस्थापन हेतु संघर्षरत है। इस भाव की अभिव्यक्ति कामायनीकार **प्रसाद जी** ने इस प्रकार किया है –

'' विषमता की पीड़ा से व्यस्त, हो रहा स्पंदित विष्व महान/ नित्य समरसता का अधिकार ,उमड़ता कारण जलधि समान/व्यथा से नीली लहरों बीच, बिखरते सुखमणि द्युतिमान।।''5

महाप्राण निराला जी की प्रगतिवादी चेतना परक समग्र रचनाएँ समाज में व्याप्त विसंगतियों एवं जड़ता के विरूद्ध क्रांति का उद्घोष हैं। भोली जनता को गुमराह कर स्वार्थलोलुप षासक अपनी सुरक्षा के सारे उपाय बड़ी चालाकी से कर रखा है। उनकी प्रसिद्ध कविता ' राजे ने अपनी रखवाली की' में स्वार्थी षासकों की चालाकी का पर्दाफाष किया गया है –

''राजे ने अपनी रखवाली की/ किला बनाकर रहा/बड़ी बडी फौजें रखी/ चापलूस कितने सामंत आये/मतलब की लकड़ी पकड़े हुए।.....जनता पर जादू चला राजे के समाज का/लोक नारियॉ के लिए रानियॉ आदर्ष हुई/.....लोहा बजा धर्म पर सभ्यता के नाम पर/ खून की नदी की नदी बही/ऑख कान मूँदकर जनता ने डुबकियॉ ली /ऑख खुली, राजे ने अपनी रखवाली की।'' 6

मनुष्य सारे मूल्यों का स्रोत और उपादान है और साथ ही स्वयं उनके विघटन का कारक भी है। जो मानवीय मूल्य सहस्त्रों वर्षों पूर्व निर्मित और विकसिक हुए थे वे अब सर्वतः विघटित होते जा रहे हैं। मानव जीवन में बढ़ते मूल्यहीनता ने मानवीय संबंधों और प्रतिमानों को अस्थिर कर दिया है। समकालीन काव्य में सामाजिक–राजनैतिक स्थितियों का यथार्थवादी चित्रण किया गया है। समकालीन कविता के अग्रदूत **सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' जी** ने अपनी कविताओं में समकालीन युगबोध का धरातलीय चित्रण किया है। 'नंदा देवी' कविता में भ्रष्ट शासन तंत्र पर कटाक्ष करते हुए स्वार्थपरता का यथार्थ चित्रण किया है –

'' वहॉ दूर षहर में , बड़ी भारी सरकार है, /कल की योजना का फैला कारोबार है/ और यहॉ इस पर्वती गॉव में ,छोटी से छोटी चीज की भी दरकार है/आज की भूख और बेबसी की , बेमुरव्वत मार है।''

समकालीन कविता के सषक्त हस्ताक्षर के रूप में **मुक्तिबोध जी** का नाम समादरणीय है। वे एक सचेत, सतर्क और सोद्देश्य कवि हैं। सामाजिक यथार्थबोध के चित्रांकन में वे कबीर और निराला जी का साहित्यिक वंषधर है। वे सच्चे जनवादी कवि हैं। उनके द्वारा प्रणीत **''चॉद का मुँह टेढ़ा है''**काव्य संग्रह में संग्रहित ''अंधेरे में'' कविता को कवियों के कवि षमषेर बहादुर सिंह ने देश के जन इतिहास का, स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात् का एक दहकता इस्पाती दस्तावेज कहा है। मुक्तिबोध जी ने आदर्ष और सिद्धांतवादिता का चोला पहन रखने वाले सत्ता लोलुप और स्वार्थ में अंधे राजनेताओं पर कटु व्यंग्य किए हैं – **'' ओ मेरे आदर्षवादी मन/ओ मेरे सिद्धांतवादी मन /अब तक क्या किया? जीवन क्या जिया/उदरम्भरि बन अनात्म बन गये/ भूतों की षादी में कनात से तन गये/ किसी व्यभिचारी के बन गये बिस्तर/.....विवेक बघार डाला ,स्वार्थों के तेल में / आदर्ष खा गये/ज्यादा लिया,और दिया बहुत बहुत कम/मर गया देष,अरे, जीवित रह गये तुम।।'' 7**

जनचेतना को पाठकों तक सहज और सरल षब्दों संप्रेषित करने वाले प्रख्यात गांधीवादी कवि **पं. भवानी प्रसाद मिश्र** ने व्यक्ति, समाज और देष का आकलन भाावात्मक स्तर पर किया है। स्वतंत्रता पष्चात् देष में राजनीति का स्तर गिरता चला गया। मानवीय एवं जनतांत्रिक मूल्यों पर स्वार्थपरता किस स्तर तक हावी हो सकता है इसका विवरण मिश्र जी ने अपने 'गीतफरोष'नामक कविता में यथार्थपूर्ण दिया है। – **'' जी, पहले कुछ दिन षर्म लगी मुझको/पर पीछे पीछे अक्ल जगी मुझको/जी लोगों ने तो बेच दिये ईमान/.आप न हो सुनकर ज्यादा हैरान/मैं सोच समझकर आखिर गीत बेचता हूँ।'' 8**

समकालीन काव्यधारा के जन कवि **बाबा नागार्जुन** संघर्षषील जनता के प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होंने अपने देष की जनता की दषा को लेकर गहरी चिंता,राजनैतिक उपेक्षा तथा बेहतर जीवन के लिए संघर्ष को अपनी कविता में उभारा है। उन्होंने प्रजातंत्र का होम करने वाले स्वार्थी और पदलोलुप नेताओं पर सीधा प्रहार किया है – **'' सामन्तों ने कर दिया प्रजातंत्र का होम/लाष बेचने लग गये खादी पहने डोम/खादी पहने डोम लग गये लाष बेचने/माइक गरजे,लगे जादुई ताष बेचने/इन्द्रजाल की छतरी ओढे श्रीमन्तों ने, प्रजातंत्र को होम कर दिया सामन्तों ने।।9**

समकालीन कविता में समाजवादी विचारधारा को प्रवाहित करने वाले कवियों में **श्री रघुवीर सहाय जी** एक सषक्त हस्ताक्षर हैं। श्री सहाय जी राजनैतिक संदर्भो को काव्य में निरूपित करने में सिद्धहस्त हैं। उन्होंने षासन की स्वेच्छाचारी षोषणवृति का पर्दाफाष करने का सार्थक प्रयास किया है। 'आपकी हॅसी' कविता में निरंकुष षासक वर्ग पर व्यंग्याघात करते हुए लिखते हैं–

निर्धन जनता का षोषण है, कह कर आप हॅसे/लोकतंत्र का अंतिम क्षण है, कहकर आप हॅसे/चारों ओर बड़ी लाचारी है,कहकर आप हॅसे/कितने सुरक्षित होंगे,मैं सोचने लगा/सहसा मुझे अकेला पाकर,फिर से आप हॅसे।।''10

'सूर्य का स्वागत',आवाजों के घेरे में,एक कंठ विषपायी और साये में धूप' जैसी प्रखर रचनाओं से समकालीन काव्यधारा में अपनी पहचान बनाने वाले समर्थ कवि **श्री दुष्यंत कुमार त्यागी** जी ने स्वाधीनता पर्यन्त देष में निर्मित जर्जर एवं अलोकतांत्रिक परिस्थितियों के जिम्मेदार सत्ताधारियों की कलई जनता के सामने खोलकर रख दिया है –**''कहॉ तो तय था चिरागॉ हरेक घर के लिए,कहॉ चिराग मयस्सर नहीं षहर के लिए।/न हो कमीज तो पॉवों से पेट ढॅक लेंगे,ये लोग कितने मुनासिब हैं, इस सफर के लिए।''11**

स्वतंत्र भारत में विपन्नता और अभाव जन्य विषम परिस्थितियों को अनुभव के स्तर पर देखने और अपनी काव्य की पैनी धार से मूलोच्छेदन करने वाले कवियों में **श्री सुदामा पांडे 'धूमिल'** का नाम अग्रणी है। धूमिल जी की कविता प्रहार और पर्दाफाष की कविता है। उनके काव्य में निहित युग सचेतक भावना को लक्षित करके कहा गया यह कथन पूर्णतः सत्य है कि '' धूमिल की कविता क्षत–विक्षत हिन्दुस्तान की तस्वीर है, वह लोकतंत्र की विफलता और राजनीतिक ,सामाजिक तथा नैतिक स्तर पर आम आदमी के साथ किये गये विष्वासघात का दस्तावेज है।''इस कथन को प्रमाणित करने वाली उनकी कविता **'रोटी और संसद'** दृष्टव्य है –

'' एक आदमी रोटी बेलता है,/एक आदमी रोटी खाता है/एक तीसरा आदमी भी है/ जो न रोटी बेलता है,न खाता है/ मैं पूछता हूँ/ यह तीसरा आदमी कौन है/ मेरे देष की संसद मौन है।'' 12

अंग्रेजी हुकुमत से स्वाधीनता तो मिल गई किंतु आत्मिक स्वाधीनता मिल न सकी। स्वार्थ के बीज से उत्पन्न सांप्रदायिकता का विष बेल ने समाज को जकड़ लिया। उनकी कविता 'बीस साल बाद इसका प्रमाण प्रस्तुत करती हुई आजादी पर प्रष्नचिन्ह लगाती है – **'' क्या आजादी सिर्फ तीन थके रंगों का नाम है/ जिन्हें एक पहिया ढोता है/या इसका कोई खास मतलब होता है?''** 13

हमारा देष विष्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देष है। हमारा संविधान जन–गण को सर्वोपरि मानते हुए उसे सभी प्रकार के समता का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया है। किन्तु यह संवैधानिक तथ्य मात्र बनकर रह गया है। वे 'अकाल दर्षन' नामक कविता में आर्थिक विषमता पर कठोर प्रष्नाघात करते हुए लिखते हैं –**''वह कौन सा प्रजातांत्रिक नुस्खा है/कि जिस उम्र में/मेरी मां का चेहरा/झुर्रियों की झोली बन गया है/ उसी उम्र की मेरे की मेरे पड़ोस की महिला के चेहरे पर/ मेरी प्रेमिका के चेहरे सा लोच है।'' 14**

सामाजिक–राजनैतिक विडम्बनाओं के प्रति व्यंग्यशर संघात करने वाले समकालीन कवियों में **श्री सर्वेष्वरदयाल सक्सेना जी** प्रमुख स्थान रखते हैं। श्री सक्सेना जी स्वयं में एक अभिव्यक्ति हैं। वे कभी समझौतावादी नहीं रहे। उन्होंने अपने काव्य–फलक पर सामाजिक–राजनैतिक खोखलेपन के व्यंग्य चित्र खीचने का प्रयास किया है। उनकी ये पंक्तियॉ दृष्टव्य है – **''लोकतंत्र को जूते की तरह/ लाठी में लटकाए/भागे जा रहे हैं सभी/सीना फुलाए।।''**

इसी कड़ी में **श्री धर्मवीर भारती जी** ने भी समकालीन राजनीतिक विसंगतियों गहरा कुठाराघात किया है। आज की राजनीति में सर्वत्र छल–प्रपंच, स्वार्थ और अवसरवादिता का बोलबाला है। वह राजनीति कम कूटनीति अधिक हो गई है। जन साधारण पक्षपातपूर्ण राजनीति के दुष्चक्र में पीसता चला जा रहा है। न्याय कहीं खो गया है। भारती जी को पूर्ण विष्वास है कि ऐसे अवसरवादियों को जनक्रांति की आग भस्मीभूत कर पाष्विक मृत्यु प्रदान करेगी। ' अंधायुग' गीतिनाट्य में श्रीकृष्ण को गांधारी द्वारा दिया गया अभिषाप यही चित्रित करता है–

'' तुमने किया है प्रभुता का दुरूपयोग/यदि सेवा में बल है/संचित तप में धर्म है/ तो सुनो कृष्ण/ सारा तुम्हारा वंष/ पागल कुत्तों की तरह/एक दूसरे को परस्पर फाड़ खाएगा/तुम खुद उनका विनाष करके कई वर्षों बाद/किसी जंगल में/साधारण व्याध के हाथों मारे जाओगे/ प्रभु हो/ पर मारे जाओगे पशुओं की तरह।।'' 15

वर्तमान राजनीति आर्थिक जगत में एकाधिकार रखने वाले पूंजीपतियों का अनुचरी हो गई है। दीर्घ अवधि के संघर्षोंपरांत मिली स्वाधीनता की पृष्ठभूमि में समतामूलक समाज की परिकल्पना आकाष–कुसुम बनकर रह गया। मणि–कंचन की चाह रखने वाले तथाकथित राजनेतागण जनतंत्र की परवाह न कर सिर्फ वायदों की खेती करते हैं। कवि **श्री नाथूराम षर्मा जी** की कविता में सामान्य जन की पीड़ा बोध उभर आया है – **'' अरबपति जनप्रतिनिधि,मणि कंचन की चाह/कौन करे जनतंत्र में जन–गण की परवाह/वायदों की खेती में ये कैसा आगाज/ गगन बीच में उड़ रहे, पंख कटे परबाज।।''16**

उपरोक्त प्रस्तुत काव्य पंक्तियॉ आधुनिक काव्य में लोकतांत्रिक मूल्यों की सषक्त अभिव्यक्ति के किंचित आषिंक उदाहरण मात्र हैं। लोकतांत्रिक मूल्य भारतीय जीवन षैली का पर्याय का है। अतः आधुनिक काव्य के समस्त रचनाकारों ने सामाजिक–राजनैतिक क्षेत्र में फैली विसंगतियों के प्रति मुखर स्वर में तीव्र विक्षोभ प्रकट किया है। जहॉ भी उन्हें असंगति दिखाई दी, वे प्रहार करने से नहीं चूके। उनका दृष्टिकोण मार्क्सवाद का अनुगामी रहा है जिसके कारण साधारण से साधारण जन को महत्त्व प्रदान करने की कोषिष की गई है। इनकी कविताएँ स्वतंत्रता पष्चात् विभिन्न समस्याओं से मुक्ति हेतु छटपटाते साधारण जन की व्यथा कथा है। इनकी कविताओं का उत्स सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से षोषित जनता की छटपटाहट है। इनकी कविताओं में जहॉ साधारण के प्रति असीम संवेदना है वहीं षोषक वर्ग के विरूद्ध आक्रोषमय चेतावनी भी। वास्तव में ये कवि जनकवि,पथ–प्रदर्षक और युग–सचेतक हैं। लोकतंत्र की प्रतिस्थापना और अक्षुण्ण बनाये रखना इनकी कविताओं का मूल उद्देष्य है। संपूर्ण मानव समाज के प्रति इनकी मंगलकामना प्रसाद जी की इन पंक्तियों में समाहित है–

''चेतना का सुंदर इतिहास, अखिल मानव भावों का सत्य,
विश्व के हृदय पटल पर,दिव्य अक्षरों से अंकित हो नित्य।
विधाता की कल्याणी सृष्टि, सफल हो इस भूतल पर पूर्ण,
पटें सागर,बिखरें ग्रह–पूंज और ज्वालामुखियॉ हो चूर्ण।।'' 17

संदर्भ सूची–

1. .मुक्तिबोध रचनावलीःभाग पॉचःपृष्ठ44 : राजकमल प्रकाषन 2011
2. मानस रहस्य : गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ 58 सं. 2069 तैंतीसवॉ पुनर्मुद्रण
3. साकेत – मैथिलीषरण गुप्त
4. रष्मिरथी – रामधारी सिंह दिनकर
5. कामायनी श्रद्धा सर्ग : जयषंकर प्रसादः आधुनिक हिन्दी काव्य : उपयोगी प्रकाषन पृ. 167
6. अर्वाचीन हिन्दी काव्य –छ.ग. ग्रंथ अकादमी –पं सूर्यकांत त्रिपाठी निराला
7. मुक्तिबोध रचनावलीःभाग एकः राजकमल प्रकाषन 2011

8. गीत फरोष – पं. भवानी प्रसाद मिश्र
9. नागार्जुन की प्रतिनिधि कविताएँ – नेषनल बुक ट्रस्ट इंडिया
10. समकालीन हिन्दी काव्य –म.प्र हिन्दी ग्रंथ अकादमीः 'आपकी हॅसी' –रघुवीर सहाय
11. साये में धूप – दुष्यंत कुमार – राधाकृष्ण प्रकाषन पृ. 13
12. संसद से सड़क तक : रोटी और संसदः धूमिल
13. वही
14. वही
15. अंधायुग : धर्मवीर भारती
16. साहित्य अमृत सितंबर 2009 पृष्ठ 60
17. कामायनी : श्रद्धा सर्ग : जयशंकर प्रसाद

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–45, वर्ष–2022 (अप्रैल–जुलाई, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.5

वाल्मीकि रामायण में अलंकार–प्रयोग

–डॉ. मोहन लाल मेघवाल
सह आचार्य, संस्कृत विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
प्रतापगढ़, राजस्थान–312605

भारतीय वाङ्मय–परम्परा में काव्य का स्थान भी शास्त्र के समतुल्य ही महत्वपूर्ण माना गया है। सूक्ति व सुभाषित भी काव्य की प्राचीन संज्ञाएँ हैं। सूक्ति के नाम पर ही काव्यशास्त्र के लिए 'सूक्तिमार्ग' संज्ञा का प्रयोग हुआ है। चतुर्थ शताब्दी में गुप्त–सम्राट् समुद्रगुप्त के अभिलेख में उनके सूक्तिमार्ग नैपुण्य की प्रशंसा की गयी है–

अध्येयः में सूक्तिमार्गः कवित–मति–विभवोत्सारणं चापि काव्यम्।[1]

कालान्तर में सूक्ति के स्थान पर अलंकार संज्ञा का प्रयोग काव्य–रचना के क्षेत्र में हुआ तथा अलंकार–चिन्तन का अर्थ काव्यशास्त्र से लिया जाने लगा। अलंकार शस्त्र की संज्ञा काव्यशास्त्र का पर्याय बन गयी। जो व्यक्ति काव्य तथा काव्य–रचना के विवेचन में तत्पर हुए हैं, उनको भारतीय परम्परा में आलंकारिक की संज्ञा दी गयी है। काव्य–रचना के क्षेत्र में पहिली शती से दसवीं शती तक जो विवेचन किया गया, उसे अलंकार की सीमा में ही समाविष्ट माना जाता है।

अलंकार शब्द काव्यशास्त्र में कितनी महत्वपूर्ण संज्ञा है, यह इससे ही जाना जा सकता है कि अकेले यह एक शब्द अपने में भारतीय काव्यशास्त्र का सम्पूर्ण इतिहास समेटे है। पण्डित प्रवर आचार्य वामन ने अपने ग्रन्थ 'काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति' के प्रारम्भ में ही कहा है कि काव्य अलंकार के योग से ही उपादेय होता है–

काव्यं ग्राह्यमलङ्कारात्।[2]

काव्यशास्त्र की गहरी नींव अलंकार के स्वरूप–विवेचन में ही दी गयी है। यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि काव्यविदों को अलंकार संज्ञा उतनी प्रिय हुई, जितनी प्रियता उन्हें काव्य–चिन्तन में सर्वोच्च प्रतिष्ठा प्राप्त ध्वनि और रस की भी स्वीकार नहीं है। ध्वनि को भी प्रसिद्ध अलंकार विशेष के रूप में स्वीकार करने के लिए काव्य–तत्वज्ञों का एक सम्प्रदाय ध्वन्यालोककार आचार्य आनन्दवर्धन के समक्ष था।[3] यदि हम काव्य के प्रयोग–पक्ष का ध्यान रखें, तो अलंकार और ध्वनि की निश्चित विभाजक रेखा भी प्रस्तुत नहीं की जा सकती केवल इतना कहा जा सकता है कि यह वाच्य अर्थ है अतः अलंकार है एवं यह आक्षिप्त अर्थ है, अतः ध्वनि है, अथवा सहृदयों की अनुभूति ही इनमें प्रमाण है। सूक्ष्मतया विवेचना करने से सिद्ध होता है, अलंकार व ध्वनि दोनों की मूल प्रेरणा भाव ही है, अतः दोनों में उल्लेखनीय साम्य है।

रामायण में अलंकार –

प्रत्येक साहित्य में प्रतिभाशाली कवियों की लेखनी से प्रसूति कतिपय ऐसे मर्मस्पर्शी काव्य हुआ करते हैं, जिनसे स्फूर्ति व प्रेरणा लेकर अवान्तरकालीन कविगण अपने काव्यों को सजाया करते हैं। ऐसे काव्यों को हम व्यापक–प्रभाव सम्पन्न होने के कारण 'उपजीव्य काव्य' के नाम से अभिहित करते हैं। संस्कृत–साहित्य में भी ऐसे उपजीव्य काव्य विद्यमान हैं, जिनमें संस्कृत भाषा तथा अन्य भाषाओं के कवियों ने अपने विषय के निर्देश तथा काव्यशैली के विमल विधान के निमित सतत उत्साह तथा अश्रान्त तथा अश्रान्त स्फूर्ति ग्रहण की है। इन उपजीव्य काव्यों में से वाल्मीकि रामायण का स्थान अतिविशिष्ट है। इसे आदिकाव्य कहा जाता है। कालक्रमानुसार संस्कृत–साहित्य के विकास में आदिम होने पर भी महर्षि वाल्मीकि की पीयूषमयी वाणी में सौन्दर्य–सृष्टि का चरमोत्कर्ष है तथा प्रशस्त काव्य–कला की उदात्तता है। काव्य तथा नाटकों को विषय–निर्देश देने में रामायण सदैव एक अक्षुण्ण स्रोत रहा है। काव्यशास्त्र के लक्षणग्रन्थों ने भी इस आदिकाव्य का अवलम्बन कर अपने लक्षण सुनिश्चित किये हैं।

आचार्य आनन्दवर्धन ने रामायण को 'सिद्धरस प्रबन्ध' कहा है–

सन्ति विद्धारसु ये च रामायणादयः।
कथाश्रया न तैर्योत्या स्वेच्छा रसविरोधिनी।।[4]

आचार्य अभिनवगुप्त की व्याख्या से 'सिद्धरस' पद का अर्थ स्पष्ट हो जाता है– 'सिद्ध आस्वादमात्रशेषः, न तु भावनीयो रसो यस्मिन अर्थात् जिस प्रबन्ध में रस की भावना नहीं करनी पड़ती, अपितु रस आस्वाद के रूप में ही परिणत हो गया रहता है, वह काव्य सिद्धरस काव्य कहलाता है।

रामायण का कलापक्ष व अलंकारिता।।

रामायण में प्रायः हृदयपक्ष की प्रधानता मानी गयी है, तथापित यह नहीं कहा जा सकता कि इसका कलापक्ष कथमपि उपेक्षित है। आदिकवि वाल्मीकि की भाषा उदात एवं सौम्य भावों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। छोटे–छोटे व प्रायः समासविहीन पदों में महर्षि ने बड़े ही सरल एवं सरस शब्दों द्वारा अपने भावों की मधुर अभिव्यन्जना की है।

अलंकार– प्रयोग में शब्दी सुषमा की ओर आदिकवि का ध्यान स्वतः आकृष्ट हुआ है। माना जाता है कि अलंकृत उक्ति की प्रथम उद्भावना वाल्मीकीय रामायण में हुई है। रामायण में अनुप्रास एवं यमक अलंकारों के माध्यम से शब्दचित्र का शोभन विन्यास स्पृहणीय है। रामायण की आनुप्रासिक शोभा सुन्दकाण्ड के पन्चम सर्ग में स्पष्टतया दृष्टिगोचर होती है–

(क) अनुप्रास अलंकार– अनुप्रास अलंकार प्रमुख शब्दालंकार माना जाता है। आचार्य विश्वनाथ ने सात्यिदर्पण में अनुप्रास अलंकार का लक्षण इस प्रकार दिया है–

अनुप्रास शब्दसाम्यं वैशम्येअपि स्वरस्य यत्।[5]

वाल्मीकि रामायण के अनुसार अलंकार के निम्नलिखित उदाहरण उद्धृत किये जा सकते हैं–

ततः स मध्यग्ड़तमंशुमन्तं ज्योत्स्नावितानं मुहृद्वमन्तम्।
ददर्श श्रीमान्भुवि भानुमन्तं गोष्ठे वृशं मत्तमिव भ्रमन्तम्।।[6]

प्रस्तुत श्लोक के चारों चरणों के अन्त में वर्णसाम्य के कारण अन्त्यानुप्रास अलंकार हैं। यहाँ ताराओं के बीच भ्रमणशील चन्द्रमा की उपमा गोशाला में गायों के बीच मस्त होकर विचरणशील वृषभ से दी गयी है, अतः उपमा अलंकार भी है।

या भाति लक्ष्मीर्भुवि मन्दरस्था तथा प्रदोशेषु च सागरस्था।
तथैव तोयेषु च पुश्करस्था रराज सा चारूनिशाकरस्था।।[7]

प्रस्तुत श्लोक में भी अन्त्यानुप्रास अलंकार स्फुट है। वाल्मीकीय रामायण की तिलक टीका में टीकाकार राजा रामवर्मा ने इस श्लोक में 'निदर्शना' अलंकार बताया है, जिसका लक्षण साहित्यदर्पणकार के अनुसार निम्नलिखित है–

संभवन्वदतुसंबन्धोअसंभवन्वापि कुत्रचित्।
यत्र विम्बानुबिम्बत्वं बोधयेत् सा निदर्शना।।[8]

अर्थात् जहाँ वस्तुओं का परस्पर सम्बन्ध सम्भव (अबाधित) एवं असम्भव (बाधित) होकर उनके बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव का बोधन करे, वहाँ निदर्शना अलंकार होता है।

प्रस्तुत श्लोक में भी जल में कमल की शोभा का जो वर्णन किया गया है, वह तो सहृदयों के लिए द्रष्टव्य है, परन्तु मन्दराचल और समुद्र की तादृशी शोभा तो महायोगियों व महात्माओं के लिए ही प्रत्यक्षगम्य है। अतः यहाँ बाधित एवं अबाधित के परस्पर बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव का बोधन होने से निदर्शन अलंकार है। रामायण की गोविन्दराजीय अथवा भाषा टीका में इस श्लोक में पर्याय अलंकार बताया गया है। पर्यायोक्त अलंकार का लक्षण निम्नलिखित है–

पर्यायोक्तं यदा भङ्ग्या गम्यमेवाभिधीयते।[9]

अर्थात्, जहाँ दूसरे रूप में, व्यंग्य बात को ही अभिधा से कह दिया जाय, वहाँ पर्यायोक्त अलंकार होता है।

स्थितः ककुद्यानिव तीक्ष्णशृंगो महाचलः श्वेतः दूर्वोर्ध्वशृंगः।
हस्तीव जाम्बूनदबद्धशृंगो विभाति चन्द्र परिपूर्णशृगः।।[10]

प्रस्तुत श्लोक में चारों चरणों में शब्दसाम्य के कारण अन्त्यानुप्रास है। यहाँ आकाश में उदित अकलङ्क्युक्त परिपूर्ण चन्द्रमा की उपमा तीखे सींग वाले खड़े बैल, ऊपर उठे हुए शिखर वाले हिमालय एवं स्वर्णजटित दाँतो वाले हाथी से दी गयी है, अतः यहाँ उपमा अलंकार भी है।

महागजैच्श्रापि तथा नदद्भिः सुपूजितैच्श्रज्ञपि तथा सुसद्भिः।
रराज वीरैच्श्र विनिःश्वसद्भिर्ह्रदां भुजङ्गैरिव निःश्वसद्भिः।।[11]

प्रस्तुत श्लोक में अन्तिम पदों में वर्णासाम्य के कारण अनुप्रास अलंकार है। यहाँ गर्व से साँस लेते हुए वीरों से भरी लंका की उपमा फुफकारते हुए सर्पो से भरे सरोवर से दी गयी है, अतः उपमा अलंकार भी है।

उष्णार्दितां सानुसृतास्त्रकण्ठीं पुरा वराहोत्तमनिष्ककण्ठीम्।
सुजातपक्ष्मामभिरक्तकण्ठीं वने प्रवृत्तमिव नीलकण्ठीम्।।[12]

उपर्युक्त श्लोक में चारों के अन्त में शब्दसाम्य होने का कारण अन्त्यानुप्रास अलंकार है। यहाँ सीता जी की तुलना वन में प्रवृत्ता मयूरी से की गयी है, अतः उपमा अलंकार की भी उत्कृष्ठ सप्रसंग योजना है।

(ख) यमक अलंकार– साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ ने यमक अलंकार का लक्षण इस प्रकार दिया है–

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यन्जनसंहते।
क्रमेण तेनैवाडडवृत्तिर्यमकं विनिग़ते।।[13]

अर्थात्, भिन्न अर्थ वाले स्वर–व्यन्जन समुदाय की उसी क्रम में आवृत्ति को यमक अलंकार कहते हैं। आदिकवि ने रामायण में यमक अलंकार का बड़ा ही रमणीय प्रयोग किया है, कतिपय उदाहरण निम्नलिखित है–

सीतामपश्यन्मनुजेश्वरस्य रामस्य पत्नीं वदतां वरस्य।
वभूव दुःखोपहतच्श्चिरस्य प्लवग्ङमो मन्द इवाचिरस्य।।[14]

रामायण की तिलक टीका के अनुसार पृथक्–पृथक् अर्थ वाले वरस्य एवं चिरस्य की आवृत्ति होने से इस श्लोक में यमक अलंकार है तथा चारों चरणों में वर्णसाम्य होने के कारण अन्त्यानुप्रास भी है।

स्थितः ककुद्यानिव तीक्ष्णशृंगो महाचलःश्वेतः इवोर्ध्वशृंगः।
हस्तीव जाम्बूनदबद्धशृंगो विभाति चन्द्रः परिपूर्णशृंगाः।।[15]

प्रस्तुत श्लोक के प्रत्येक चरण के अन्त में प्रयुक्त श्रृंग शब्द के भिन्न–भिन्न अर्थ है। प्रथमचरणगंत श्रृंग का अर्थ सौंग, द्वितीय चरणगत, श्रृंग का अर्थ शिखर तृतीय पादगत श्रृंग का अर्थ दॉत और चतुर्थ पादगत श्रंग का अर्थ कलंक है। इस प्रकार यहाँ यमक अलंकार है।

इस प्रकार शब्दालंकारों विशेषतः अनुप्रास अलंकार का सौन्दर्य महाकवि वाल्मीकि के आदिमहाकाव्य रामायण में अत्यधिक विशिष्टता से प्रकट हुआ है।

अर्थालंकार –

अर्थालंकारों का प्रयोग भी महर्षि वाल्मीकि ने अत्यधिक कुशलता एवं सजगता से किया है। सभी प्राचीन अर्थालंकार यथा– स्वभावोविक्त, रूपक, उपमा, दीपक एवं उत्प्रेक्षा का दर्शन रामायण में होता है। सम्भवतः इसके सभी अध्यायों को भी इसी कारण से काण्ड कहा जाता है क्योंकि इसके प्रायः सभी श्लोक

अलंकार–रसादि से युक्त हैं। रामायण में अर्थालंकारों की नैसर्गिक योजना से अलंकृत कतिपय श्लोकों के उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(क) स्वभावोक्ति अलंकार– आचार्य विश्वनाथ ने स्वभावोक्ति अलंकार का क्षण इस प्रकार से दिया है–

स्वभावोक्तिर्दुरूहार्थस्वक्रियारूपवर्णनम्।।[16]

अर्थात् कविमात्र से ज्ञातव्य किसी व्यक्ति की चेष्आ अथवा उसके स्वरूप–स्वभव आदि के तथावत् मनोहारी वर्णन को स्वभावोक्ति अलंकार कहते हैं। आदिकवि ने रामायण में कई स्थलों पर स्वभावोक्ति अलंकार के अतिरमणीय प्रयोग किये हैं। रामायण में अरण्यकाण्ड में लक्ष्मण द्वारा हेमन्त ऋतु की मन्जुलता के वर्णन में कई श्लोकों में स्वभावोक्ति का सुन्दर प्रयोग दिखता है–

अवश्यायनिपातेन किन्चत्प्रक्लिन्नशादूला।
वनानां शोभते भूमिर्निविष्टतरूणातपा।।
स्पृशम् सुविपुलं शीतमुद्रकं द्विरदः सुखम्।
अत्यन्तवृषितो वन्यः प्रतिसंहरते करम्।।
एते हि समुपासीना विहगा जलचारिणः।
नावगाहन्ति सलिलमप्रगल्भा इवाहवम्।।
अवश्यायतमनोद्धा नीहारतमसावृताः।
प्रसुप्ता इव लक्ष्यन्ते विपुष्पा वनराजयः।।
वाष्पसंछत्रसलिला रूतविज्ञेयसारसाः।
हिमर्द्रवालुकैस्तीरैः सरितो भान्ति साम्प्रतम्।।[17]

उपर्युक्त श्लोकों में हेमन्त ऋतु की मनोहरताका वर्णन लक्ष्मण द्वारा किया गया है। प्रकृति का यह वर्णन विशुद्ध स्वाभाविक है। सिवाय प्रसुप्ता इव लक्ष्यन्ते विपुष्पा वनराजयः में मानवीकरण के आभाव के यहाँ कहीं कोई अलंकार अथवा लाक्षणिक या व्यंजक शब्द–प्रयोग आदि कुछ नहीं है, यहाँ तक कि चमत्कारिक सानुप्रासिक शब्दावली भी विशेष नहीं है। फिर भी स्वभावोक्ति अलंकार के कारण प्रस्तुत प्रकृतिवर्णन में रमणीयता आ गयी है। इसी प्रकार का वर्णन वाल्मीकीय रामायण में अनेक स्थलों पर प्रकृति–चित्रण में मिलता है, यथा किष्किन्धाकाण्ड में श्रीराम द्वारा वर्षा–वर्ण, मतंगमुनि के आश्रम की शोभा का वर्णन आदि।

सन्दर्भ –

1. समुद्रगुप्त का प्रयाग–अभिलेख (प्रयाग–प्रशस्ति)।
2. काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति, 1/1/1
3. ध्वन्यालोक, 1/13
4. ध्वन्यावलोक, पृ. 158
5. साहित्यदर्पण, 10/3
6. वाल्मीकीय रामायण, सुन्दरकाण्ड, 5/1
7. वही, 5/3
8. साहित्यदर्पण, 10/51
9. वही, पृ. 345
10. वाल्मीकीय रामायण, सुन्दरकाण्ड, 5/5
11. वही, 5/25

Global Recognition and Future Prospects of Vedic Mathematics and Indian Knowledge System

-Dr. Lokesh Jasoria

Abstract

The Indian Knowledge System (IKS) represents one of the world's oldest and most comprehensive intellectual traditions, encompassing philosophy, science, mathematics, medicine, astronomy, linguistics, and education. Among its important components, Vedic Mathematics has gained considerable global recognition for its innovative and efficient computational techniques. In recent years, the increasing emphasis on holistic and multidisciplinary education, particularly under the National Education Policy (NEP) 2020, has revived academic interest in Indian traditional knowledge systems. This paper examines the global recognition of Vedic Mathematics and IKS, their educational significance, present challenges, and future prospects in the context of globalization and modern pedagogy. The study is based on secondary data collected from journals, policy documents, research articles, and educational reports. The paper concludes that Vedic Mathematics and IKS possess significant potential to contribute to global education, cognitive development, interdisciplinary research, and sustainable knowledge traditions.

Keywords: Vedic Mathematics, Indian Knowledge System, NEP 2020, Global Education, Traditional Knowledge, Mathematical Pedagogy, Holistic Education

1. Introduction

India has a rich intellectual heritage that has contributed immensely to world civilization in the fields of mathematics, astronomy, medicine, philosophy, linguistics, and education. Ancient Indian scholars developed advanced mathematical concepts such as zero, decimal systems, algebra, geometry, and trigonometry centuries before many modern discoveries. The Indian Knowledge System (IKS) represents the organized body of traditional Indian wisdom preserved through the Vedas, Upanishads, Puranas, Ayurveda, Yoga, and classical scientific literature.

Vedic Mathematics, reconstructed and popularized by Bharati Krishna Tirtha, consists of sixteen Sutras and thirteen Sub-Sutras designed for rapid mental calculations and simplified mathematical problem-solving. Though debates continue regarding the direct Vedic origins of these methods, scholars acknowledge their effectiveness in improving computational speed and mathematical confidence.

With globalization and educational reforms, especially after the introduction of NEP 2020, there has been renewed attention toward integrating indigenous knowledge into mainstream education. Countries across the world are increasingly recognizing the value of culturally rooted and holistic systems of learning.

Literature Review

S. No.	Author(s) & Year	Title of Study	Objectives	Methodology	Major Findings
1	Bharati Krishna Tirtha (1965)	Vedic Mathematics	To introduce sixteen Sutras and Sub-Sutras for simplified mathematical calculations	Conceptual and descriptive study	The study established Vedic Mathematics as a rapid mental calculation system and highlighted its educational usefulness in arithmetic and algebra.
2	Jagadguru Swami Bharati Krishna Tirthaji Maharaj	Mental Mathematics and Speed Calculation	To simplify conventional mathematical procedures	Analytical approach	The research emphasized that Vedic techniques improve computational speed, memory, and confidence among learners.
3	Noble Saji Mathews et al. (2022)	VedicViz: Towards Visualizing Vedic Principles in Mental Arithmetic	To explore digital visualization of Vedic mathematical principles	Experimental and technological study	The study found that digital tools can improve understanding and accessibility of Vedic Mathematics globally.
4	Priyanka Sharma (2025)	Contribution of Vedic Mathematics in Indian Knowledge System	To analyze the role of Vedic Mathematics within IKS	Review-based research	The paper concluded that Vedic Mathematics contributes significantly to cognitive development and aligns with holistic educational practices.
5	University Grants Commission (2023)	Guidelines for Incorporating Indian Knowledge System in Higher Education	To integrate IKS into higher education curriculum	Policy analysis	The guidelines emphasized multidisciplinary education and promotion of indigenous knowledge traditions in universities.
6	Pavan Mandavkar (2024)	Indian Knowledge System and National Education Policy 2020	To examine the role of IKS in NEP 2020	Descriptive and policy-oriented study	The study highlighted that NEP 2020 provides institutional support for integrating Indian traditional knowledge into modern education.
7	UNESCO (2024)	State of Education Report on	To examine indigenous knowledge systems in education	Global comparative analysis	The report emphasized the importance of preserving traditional knowledge systems and integrating them into

S. No.	Author(s) & Year	Title of Study	Objectives	Methodology	Major Findings
		Indigenous Knowledge			sustainable education models.
8	Jaidev Dasgupta (2024)	Emergence of Mathematics in Ancient India	To study historical contributions of ancient India to mathematics	Historical and analytical study	The paper recognized India's contribution to algebra, geometry, and numerical systems, enhancing global appreciation for Indian mathematical traditions.
9	Bhawana Kumar et al. (2025)	Use of Ancient Indian Knowledge in Mathematics Pedagogy	To evaluate pedagogical applications of ancient Indian mathematics	Educational research and survey method	The study found that Vedic Mathematics improves student engagement, reduces mathematics anxiety, and enhances classroom participation.
10	Ministry of Education (2020)	National Education Policy 2020	To reform Indian education through multidisciplinary and holistic learning	Policy framework analysis	The policy strongly recommended inclusion of Indian Knowledge Systems and traditional learning approaches in school and higher education curricula.

2. Concept of Indian Knowledge System (IKS)

The Indian Knowledge System refers to the accumulated body of knowledge developed in India over thousands of years. It includes disciplines such as:

- Mathematics
- Astronomy
- Ayurveda
- Yoga
- Philosophy
- Agriculture
- Architecture
- Ethics and Governance
- Linguistics and Literature

IKS emphasizes harmony between knowledge, ethics, spirituality, and practical life. The system focuses on holistic development, experiential learning, and value-based education. According to recent educational literature, IKS is now being reconsidered as an important framework for sustainable and culturally inclusive education.

3. Vedic Mathematics: Meaning and Features

Vedic Mathematics is a system of mathematical techniques based on sixteen Sutras (aphorisms) and thirteen Sub-Sutras compiled by Bharati Krishna Tirtha in the twentieth century. These methods simplify arithmetic calculations, algebraic operations, factorization, and mental computations.

Some important features of Vedic Mathematics include:

- Faster calculations
- Mental computation techniques
- Reduction in calculation time
- Development of logical thinking
- Enhancement of concentration and memory
- Simplification of complex problems

For example, multiplication techniques in Vedic Mathematics enable students to solve problems mentally without lengthy conventional procedures.

A commonly discussed multiplication principle is:

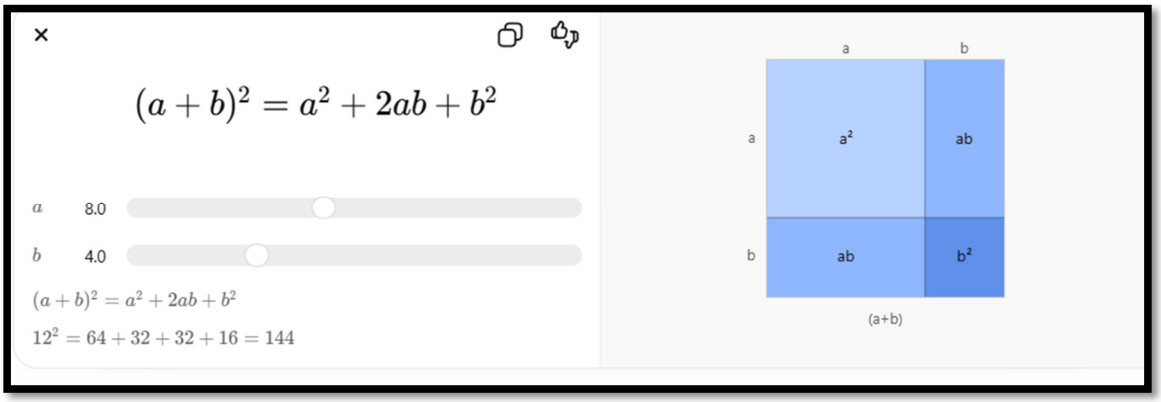

Research studies indicate that Vedic Mathematics improves computational efficiency, problem-solving ability, and students' confidence toward mathematics.

4. Global Recognition of Vedic Mathematics and IKS

4.1 International Interest in Indian Knowledge Traditions

Indian knowledge traditions such as Yoga, Ayurveda, Sanskrit studies, and meditation have already gained worldwide recognition. Similarly, Vedic Mathematics is increasingly being introduced in schools, workshops, online platforms, and skill-development programs in countries such as the United States, the United Kingdom, Australia, Singapore, and South Africa.

Recent educational studies note that concepts like Yoga, Ayurveda, and Vedic Mathematics are receiving global academic and cultural recognition due to their practical applications and holistic orientation.

4.2 Educational Institutions and Research

Several universities and educational institutions worldwide are conducting seminars, workshops, and research on Indian traditional knowledge systems. Research in

ethnomathematics and cognitive learning has further increased interest in Vedic mathematical methods.

Digital learning tools and visualization platforms such as VedicViz have also contributed to international awareness by making mental arithmetic techniques interactive and accessible.

4.3 UNESCO and Cultural Recognition

Efforts are being made to obtain international cultural recognition for Vedic Mathematics under UNESCO's Intangible Cultural Heritage framework. Reports indicate that organizations promoting Vedic Mathematics have initiated proposals for UNESCO recognition similar to other traditional mathematical systems recognized globally.

4.4 NEP 2020 and Policy Support

The National Education Policy 2020 strongly supports the integration of Indian Knowledge Systems into modern education. It encourages multidisciplinary learning, cultural rootedness, and inclusion of traditional knowledge in subjects such as mathematics, science, and arts.

The policy aims to transform India into a "global knowledge superpower" while preserving indigenous intellectual traditions.

5. Educational Importance of Vedic Mathematics

Vedic Mathematics has several educational benefits:

5.1 Improvement in Computational Skills

Students can perform calculations quickly and accurately using mental techniques. This enhances numerical ability and reduces dependency on calculators.

5.2 Reduction of Mathematics Anxiety

Research suggests that Vedic methods make mathematics more enjoyable and less stressful, thereby reducing fear associated with the subject.

5.3 Enhancement of Cognitive Development

Vedic Mathematics promotes concentration, memory retention, analytical thinking, and creativity.

5.4 Support for Competitive Examinations

Fast calculation techniques are highly useful in aptitude tests, banking examinations, and competitive examinations.

5.5 Holistic Learning

IKS and Vedic Mathematics encourage integrated and value-based education rather than rote memorization.

6. Challenges in Global Acceptance

Despite growing recognition, several challenges remain:

6.1 Debate Regarding Historical Authenticity

Some scholars argue that Vedic Mathematics is not directly derived from ancient Vedic texts but was reconstructed in modern times.

6.2 Lack of Standardized Curriculum

There is limited uniformity in teaching methods, curriculum frameworks, and certification systems.

6.3 Insufficient Scientific Validation

More empirical and interdisciplinary research is needed to establish the effectiveness of Vedic Mathematics through scientific educational methodologies.

6.4 Teacher Training Issues

Many teachers are not adequately trained to integrate IKS concepts into classroom teaching.

6.5 Risk of Commercialization

The rapid commercialization of Vedic Mathematics through coaching programs may reduce academic rigor and authenticity.

7. Future Prospects of Vedic Mathematics and IKS

7.1 Integration into Modern Education

The future of Vedic Mathematics lies in its balanced integration with contemporary mathematical pedagogy. Schools and universities can adopt hybrid teaching approaches combining traditional and modern techniques.

7.2 Research and Innovation

Interdisciplinary research involving mathematics, psychology, artificial intelligence, cognitive science, and education can expand the practical applications of Vedic methods.

For example, computational efficiency concepts can be represented mathematically through optimization-oriented formulations such as:

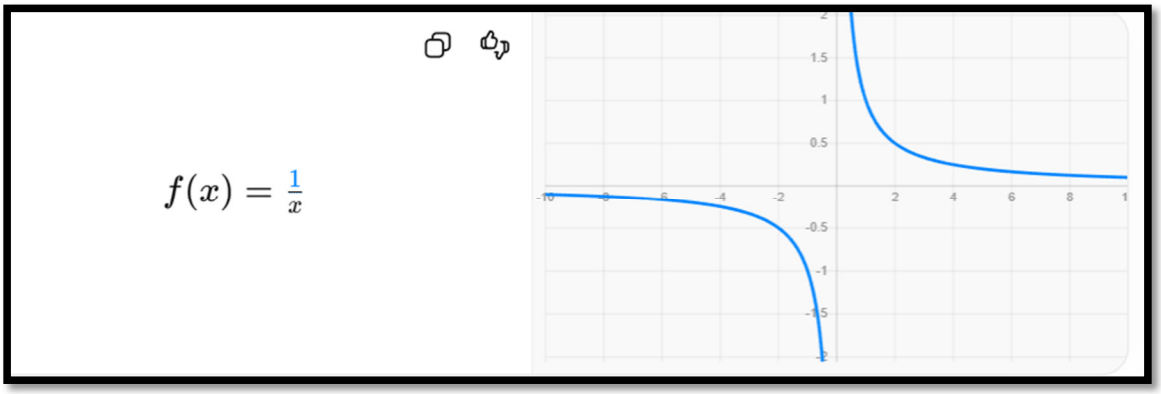

7.3 Digital Learning Platforms

Online education, educational apps, and AI-based tutoring systems can promote global accessibility of Vedic Mathematics.

7.4 Global Academic Collaboration

International conferences, exchange programs, and collaborative research can strengthen the academic credibility of IKS.

7.5 Contribution to Sustainable and Holistic Education

The global education system increasingly values ethical, sustainable, and holistic learning approaches. IKS offers philosophical foundations that align with these emerging educational needs.

8. Suggestions

1. Develop standardized curriculum frameworks for Vedic Mathematics.
2. Encourage interdisciplinary research on IKS.
3. Introduce teacher-training programs related to Indian Knowledge Systems.
4. Promote international collaborations and academic exchanges.
5. Digitize ancient Indian manuscripts and knowledge resources.
6. Establish dedicated IKS research centers in universities.
7. Encourage evidence-based educational research on Vedic Mathematics.

9. Conclusion

Vedic Mathematics and the Indian Knowledge System represent valuable intellectual traditions with significant relevance in contemporary education and global knowledge discourse. Their emphasis on mental ability, holistic development, ethical learning, and cognitive enhancement makes them increasingly important in the modern educational environment. The global popularity of Yoga, Ayurveda, and traditional Indian philosophy has created favorable conditions for the international recognition of Vedic Mathematics and IKS.

Although challenges such as historical debates, lack of standardization, and insufficient empirical validation continue to exist, recent policy initiatives, educational reforms, and technological advancements provide strong opportunities for future growth. The integration of traditional Indian wisdom with modern scientific approaches can contribute meaningfully to sustainable, inclusive, and multidisciplinary education worldwide.

References

1. UNESCO. State of the Education Report for India 2024. (UNESCO Publishing)
2. Bharati Krishna Tirtha. Vedic Mathematics. Motilal Banarsidass Publishers.
3. Kumar, Bhawana et al. “Use of Ancient Indian Knowledge in Mathematics Pedagogy.” (TIJER)
4. Sharma, Priyanka. “Contribution of Vedic Mathematics in Indian Knowledge System.” (Zenodo)
5. Mandavkar, Pavan. “Indian Knowledge System and NEP 2020.” (ResearchGate)
6. “Unveiling the Indian Knowledge System: A Comprehensive Study.” (IJFMR)
7. “National Education Policy 2020: Significance of Indian Knowledge System.” (books.kdpublications.in)
8. Mathews, Noble Saji et al. “VedicViz: Towards Visualizing Vedic Principles in Mental Arithmetic.” (arXiv)
9. Dasgupta, Jaidev. “Emergence of Mathematics in Ancient India.” (arXiv)
10. “Forum Seeks UNESCO Tag for Vedic Maths.” (The Times of India)